कुएँ में भाँग

डॉ. कुँवर वीरेन्द्र विक्रम सिंह गौतम

निवेदन

गत 50 वर्षों में लेखन की विभिन्न विधाओं में यथा कविता, गज़ल, हास्य रचनाएँ (गद्य एवं पद्य) यदा–कदा लिखता रहा। वर्ष 1969 में प्रतिष्ठित पत्रिका धर्मयुग में पहली हास्य रचना (इस संकलन की प्रथम रचना) के प्रकाशन के बाद यदा–कदा रचनाओं का प्रकाशन विभिन्न पत्रिकाओं एवं स्थानीय समाचार पत्रों से होता हुआ वर्ष 1992 में **ख़त आषाढ़ के** प्रकाशन तक पहुँचा जो मेरी कुछ कविताओं और ग़ज़लों का प्रथम मुद्रित संकलन था। इस पुस्तक में हास्य–व्यंग्य की एक भी रचना नहीं थी। इसका कारण था हास्य–व्यंग्य की रचनाओं की एक डायरी का लापता होना जो किसी मित्र की विशेष अनुकम्पा की भेंट चढ़ गई। फलस्वरूप, हास्य रचनाओं का प्रथम मुद्रित संकलन वर्ष 1999 में तब सामने आया जब विषयानुकूल और विधानुकूल रचनाओं की अलग–अलग सम्पूर्ण प्रस्तुति का विचार मन में आया। वर्ष 1999 में **अनाहूत**, **बबूलों के तले** और **कुएँ में भाँग** क्रमशः सम्पूर्ण कविता संग्रह, ग़ज़ल संग्रह और हास्य–व्यंग्य रचनाओं के संकलन के रूप में तैयार हुए।

आज लगभग 20 वर्षों के बाद इन तीनों पुस्तकों और **ख़त आषाढ़ के** की प्रतियाँ अनुपलब्ध हैं। दूसरी ओर इन 20 वर्षों के दौरान नई रचनाओं का सृजन भी होता रहा। इसी बीच ई–बुक्स का दौर भी आ गया।

अनाहूत, **बबूलों के तले** और **कुएँ में भाँग** को ई–बुक्स के रूप में नई रचनाओं को मिलाकर स्वप्रकाशित करने का विचार का परिणाम हैं ये प्रकाशन। इनमें **अनाहूत** और **कुएँ में भाँग** पूर्व नाम के साथ प्रस्तुत हैं जबकि **बबूलों के तले** नए नाम **सुकून–ए–ख़ातिर** नाम से प्रस्तुत है।

दस्तावेज के रूप में तैयार ये विभिन्न संकलन मुख्य रूप से अगली पीढ़ी को समर्पित हैं –

– डॉ. कुँवर वीरेन्द्र विक्रम सिंह गौतम

दिनांक : 24 जून,2020

अनुक्रम

प्रथम खण्ड (कविताएं)

द्वितीय खण्ड (आलेख)

प्रथम खण्ड

कविताएं

घरवालियाँ तो लाल–लाल ही चिल्लाती हैं

लाल जीभ, लाल होंठ, लाल टीका माथे पर,
लाल माँग सेंदुर से रंग इतराती हैं,

लाल डोरे आँखों में, गाल भी हैं लाल–लाल,
लाल अंग पर लाल साड़ी फहराती हैं,

हाथ की गदेलियाँ भी लाल करें मेंहदी से,
पाँवों में लाल वे महावर रचाती हैं,

हाथ और पाँव के नाखून रंगें लाल–लाल,
क्रोध में तो एकदम गुलाल हो जाती हैं,

कैसे हो देश में नियोजित परिवार यार,
घरवालियाँ तो लाल–लाल ही चिल्लाती हैं।

देखेंगे यार सुबह किसकी सरकार है

हमका ता राजनाात लगता व्यापार ह,
बिरले ईमानदारए छाया कदाचार है।

सदन में हैं जूझ रहे लातों से, बातों से,
कैसे–कैसे वीरों की देश में भरमार है।

माइक ले हाथ में सब कीचड़ उछाल रहे,
बाकी हैं चोर, एक वही ईमानदार है।

किससे है स्नेह इन्हें, जनता भी जान गई,
नेता हैं नाम के, बस गद्दी से प्यार है।

सोते हम रोज रात मन में ये बात लिये,
देखेंगे यार सुबह किसकी सरकार है।

...

नेता – पुराण

मन में बैठे द्वंद का करने को उपचार,
पकड़ा हमने राह में, एक मित्र बेकार,
एक मित्र बेकार, द्वंद बतलाया उसको,
नेता किसको कहें, समझ आता नहीं हमको,
दाँत दिखाकर कहा, प्रश्न है उत्तम तेरा,
चलो पिलाओ चाय, सुनो फिर उत्तर मेरा।

होटल में फिर बैठकर, कथा करी आरम्भ,
ध्यानपूर्वक हम सुनें, नेता का प्रारम्भ,
नेता का प्रारम्भ,''यार है बहुत पुराना,
प्रथम शर्त है लोगों से हो अधिक सयाना,
इधर – उधर की बात सुनाकर काम चलाए,
सच्चे मानो में तो, नेता वही कहाए।

बाना कस धारण करे, आगे सुन ये हाल,
मधुर रूप इनका बहुत सुनकर होव निहाल,
सुनकर होव निहाल, पहनते कुर्ता – धोती,
टोपी सर पर धरे, छटा ये अनुपम होती,
मुँह पर चमके तेज न चाहे, बात ये मानो,
बाना ऐसा दिखे, तो नेता उसको जानो।

नेता असली होत है, मौके दर्शन देय,
वोट चाहिये जब उसे, हाथ–पैर छू लेय,
हाथ–पैर छू लेय, बात जो लम्बी हाँके,
जिसकी बातें सुनकर वोटर बगलें झांके,
वादे करे अनेक, बाग बहु भाँति दिखाए,
याद न रखे एक मिनिस्टर जब हो जाए।

नेता असली मानिए, पानी सा जो होय,
चुपके से वो बह चले ढाल जिधर को होय,
ढाल जिधर को होय, नाम की जिसे न चिन्ता,
बहुमत जिसके साथ, दौड़ उससे जा मिलता,
वो नेता 'सरताज', न जिसका कोई झण्डा,
'दलबदलू' कहलाए चाहे वह मुस्तन्डा''।

बातें सुनकर मित्र की, आँखें कर ली बंद,
नेताओं के प्रश्न पर, शांत हो गया द्वंद,
शांत हो गया द्वंद, तभी बिल वेटर लाया,
आँखें खोली, मित्र कहीं भी नज़र न आया,
वेटर बोला हँसकर, साहब! हम बतलाता,
जो दूजों का खाए, वह नेता कहलाता।

...

आधुनिक बीवी

बीवी इतनी व्यस्त है, फुरसत उसको नाहिं,
रैनबसेरे के लिए, ही आए घर माहिं,
ही आए घर माहिं, मियाँ बच्चों को सेवैं,
कौतुक करे अनेक, कहीं बच्चे न रोवैं,
रात गए जब आई, खाकर डाँट लगाई,
सब्जी तुमने आज ठीक फिर नहीं पकाई।

थकी हुई थी इसकदर, झट से फिर गई सोय,
चिन्ता बाहर की उसे, घर का कुछ भी होय,
घर का कुछ भी होय, स्वप्न ये देख रही है,
कैसे हो कल्याण देश का – बोल रही है,
''कुछ कर सकते नहीं, मर्द हैं सारे मक्खी,
इनसे कह दो – चलें सम्हालें घर की चक्की''।

सोयी थी वह देर से, सुबह जगाए कौन?
बच्चों का मुँह दाबकर, मियाँ खड़े हैं मौन,
मियाँ खड़े हैं मौन, तभी निंद्रा तज बोली–
''बेड–टी लेकर आओ जल्दी'', छूटी गोली,
मियाँ बनाकर चाय काँपते लाये जल्दी,
और जल्दी में चाय भूलकर डाली हल्दी।

पीली–पीली चाय जब देखी आँखें खोल,
बीवी भी घबरा गई, बुद्धी हो गई गोल,
बुद्धी हो गई गोल, मियाँ घबरा कर बोले,
अच्छे – अच्छे तुझे देख, पड़ जाते पीले,
हो गया मूड खराब, आ गई आफत भारी,
प्याली – प्लेट मियाँजी के ऊपर दे मारी।
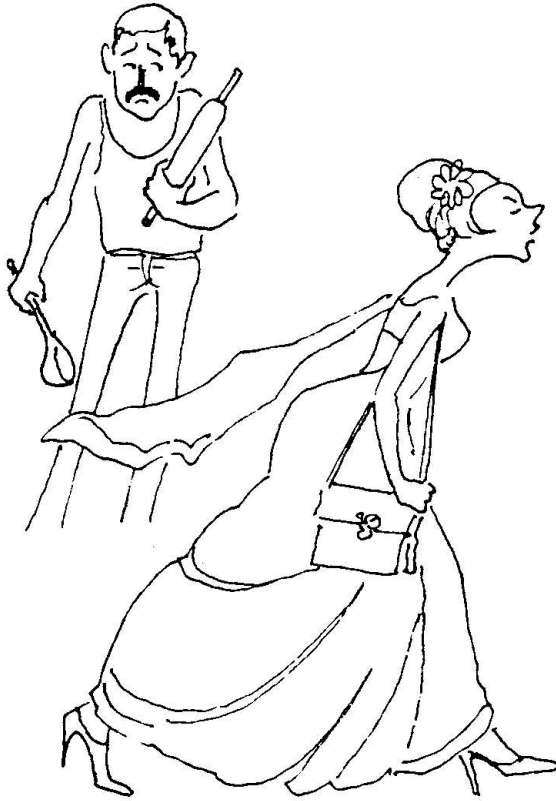
बीवी जी चिल्ला रही, आँखें रही तरेर,
फिक्र नही कुछ भी तुम्हें, करवा दोगे देर,
करवा दोगे देर, गोष्ठी में है जाना,
खाना मेरा बाहर, घर में नहीं बनाना,
लेकर सुख की साँस, मियाँ बोले मन माँही,
प्रिय! तुम जाओ शीघ्र, चैन पाऊँ घर माँही।

...

साथ तुम्हारे घूमेगी सत्ता बन बाँदी

राजनीति के बाँकुरे हैं फिर से तैयार,
युद्धभूमि फिर बन गया दिल्ली का दरबार,
दिल्ली का दरबार, परेशाँ अवसरवादी,
जनता है होशियार, बेअसर अब है खादी,
'गौतम' फिर एक बार मोर्चे विकट जुड़ेंगे,
पहलवान–नेता–अभिनेता सभी भिड़ेंगे।

सात पुस्त के वास्ते करने को प्रावधान,
इस चुनाव में आप भी कूद पड़ें श्रीमान,
कूद पड़ें श्रीमान, मिलेंगे वोट, नोट दें,
कोई करे विरोध अगर, तो उसे चोट दें,
'गौतम' जीत गये तो काटोगे कल चाँदी,
साथ तुम्हारे घूमेगी सत्ता बन बाँदी।

...

इससे बेहतर यहीं चैन से तो है कटती

साझे की हड़िया गई, चौराहे पर फूट,
गली–गली में शोर है, लूट सको तो लूट,
लूट सको तो लूट, हुए मंत्री–पद खाली,
हैं सीमित स्थान, सैकड़ों यहाँ सवाली,
घरवाली सिखलाती 'गौतम' होड़ लगाओ,
इस चुनाव में उतर पड़ो, मंत्री–पद पाओ।

सुन कर यह प्रस्ताव हम श्रीमती पर खीझे,
नारी के रहती सदा अक्ल पैर के नीचे,
अक्ल पैर के नीचे, आया कलियुग ऐसा,
भारत में अब इस पद का कुछ नहीं भरोसा,
दो दिन का बस खेल, जान शांशत में रहती,
इससे बेहतर यहीं चैन से तो है कटती।

...

भूल–सुधार

विवाह के बाद पहली बार,
जब आया होली का त्योहार,
तो साली का करके ख़याल,
हम जा पहुँचे अपनी ससुराल।
द्वार पर खड़े चाकर ने
बड़े ही आदर से,
बैठक का द्वार खोला
और बोला–
''पधारें, कुँवर साहब!''

हमको सूझी ठिठोली,
आखिर था मौका–ए–होली,
हमने चेहरे पर
गम्भीर मुद्रा ओढ़ी,
और बैठ गए;
ससुर जी को आते देखा
तो ऐंठ गए।

ससुर जी ने पूछा–
''कैसे हो बरखुरदार?''
हमने फरमाया–
''खबरदार!,
हाल–चाल का चक्कर
मत चलाइए,
पहले यह बतलाइए,
आपके चाकर ने क्यों
किया मेरा अपमान?
क्या उसे
किंचित भी नही ज्ञान
कि शब्दों के पहले
'कु' लगा देने से
अर्थ का अनर्थ
हो जाता है?!
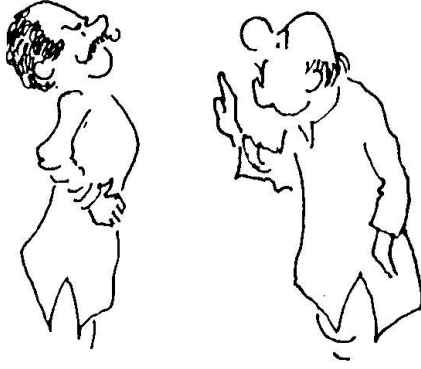
कि पात्र कुपात्र हो जाता है,
पुत्र कुपुत्र हो जाता है?!
मुझे बताएँ श्रीमान!
क्यों उसने मुझसे
आपकी कन्या के वर से,
यह कहा–
'पधारें, कुँवर साहब!''

ससुर जी सिटपिटाने लगे,
हमारे कुतर्क पर चकराने लगे,
पास खड़ा चाकर भी
पहले बौखलाया,
फिर मंद–मंद मुस्कुराया।
इससे पहले कि ससुर जी
कुछ कह पाते,
चाकर ने भूलसुधार में
तत्परता दिखलाई,
बिगड़ी बात बनाई,
करबद्ध होकर,
मेरे सम्मुख नमित होकर
वह बोला,
''माफ करें सुँवर साहब!''

...

फागुनी उमंग में

होली के रंग में,
भंग की तरंग में,
फागुनी उमंग में,
हमने दूर–दूर तक–
नज़र दौड़ाई,
लैला–मजनू के टक्कर की
प्रेम–कहानी लिखने को
सिर्फ पत्नी ही पड़ी दिखाई ।

हमने उसी को बुलाया
और फरमाया–
"जैसे–जैसे हो रहा हूँ मैच्योर,
नज़र हो रही है कमजोर,
अब और नही चल पाऊँगा,
इस बार बच गया तो
अगली होली पर जरूर
अंधा हो जाऊँगा।
यदि हो जाये ऐसा,
तो यह विचार है कैसा?
बाँधकर आँखों पर पट्टी,
बन जाना तुम गाँधारी,
लैला–मजनू की तरह
हिट होगी जोड़ी हमारी,
अमर होगी प्रीत हमारी।"

सुन कर मेरी बात,
पत्नी ने कहा छूकर मेरे कंधे,
"ऐ फ्यूचर में होनेवाले अँधे!
इसका जवाब अगर चाहिए,
तो पहले एक गोली
हमें भी खिलाइये।"

खाकर भांग की एक गोली
पत्नी मेरी यह बोली,
''समझ गई तुम्हारी मक्कारी,
बनाकर मुझको गाँधारी,
खेलना चाहते हो रंग,
मोहल्लेवाली भौजाइयों के संग;
जम नही सकती
हाथों में सरसों,
अँधा चाहे कल बनो
या परसों,
अरे, सींग कटाकर—
अब बछड़ा नही बन पाओगे,
यह गंजी होती चाँद—
कैसे छिपाओगे?
भंग की तरंग में
माना कि दिल मचलता है,
राख हो चुका कोयला
मगर कहाँ जलता है?
और यदि तुम
वाकई हो सीरियस,
तो इतना जानलो—
सौ बच्चोंवाले धृतराष्ट्र
अब अजायबघर में भी
नही मिलते हैं।
चार—छः के बाद
बड़े—बड़ों के
कलेजे दहलते हैं।
एक तुम हो!
जो महंगाई के डर से
एक से दो पर
नही पहुँच पाए हो,
फिर भी यदि
धृतराष्ट्र बनने पर
बौराये हो,

खोल कर कान
श्रीमान!
आधुनिक युग की हूँ नारी
क्यों मानूँ बात तुम्हारी?
द्रौपदी के चरित्र पर भी
कर सकती हूँ
विचार,
आपे में रहियेगा, सरकार!''

...

नेताजी का अपच

नेताजी को था अपच, डॉक्टर एक नादान,
कारण–शोधन में भिड़ा, लगा रहा अनुमान,
लगा रहा अनुमान, व्यक्त की यह आशंका,
बदपरहेजी की मुझको होती है शंका,
किसी कृपण के यहाँ खा लिया या तो बासी भात,
या सरकारी भोज में, मुर्गा – व्हिस्की साथ।

नेताजी झल्ला उठे, सुन कर यह अनुमान,
मूर्ख चिकित्सक! तू मुझे लगता है नादान,
लगता है नादान, मेरी कमजोर न आँतें,
चंदा हो या फंड, डकारे बिना पचा दें,
मुर्गा–व्हिस्की नहीं, न मैने खाया बासी भात,
पार्टी में कल खा गया भारी भितरघात।

डॉक्टर अनुभवहीन था, बिना दिए कुछ ध्यान,
बोला, ''सेहत के लिए, कम खाएँ श्रीमान,
कम खाएँ श्रीमान, हमारी बात समझिए,
औषध से बेहतर होगा, परहेज बरतिए,
उत्तम यही निदान, हृदय में रखिये इसे सहेज,
नहीं पचे तो कीजिए, पार्टी से परहेज।''

नेताजी पुलकित हुए, सुन व्यावहारिक ज्ञान,
बोले, ''हे धन्वंतरी! हे हकीम लुकमान!
हे हकीम लुकमान! सूत्र अद्‌भुत दे डाला,
पार्टी के प्रति मन में था जो मोह, निकाला,
नहीं पचेगी जो, वह पार्टी नही चलेगी,
वही बनाऊँ ठौर, जहाँ पर दाल गलेगी।''

...

वो जो हर बार मिलते ही मुस्कुराता है।

वो जो हर बार मिलते ही मुस्कुराता है।
दोनों हाथ जोड़ कर,
कमर को तोड़ कर,
झुक–झुक जाता है;
शत्रु है न मित्र है,
आदमी विचित्र है,
सहज स्वभाव से,
सरल हाव–भाव से,
चक्कर चलाता है,
चूना लगाता है–
वो जो हर बार मिलते ही मुस्कुराता है।

उत्सुक हैं आप अगर,
परिचय कराता हूँ,
नाम मुख्य चीज नहीं,
काम ही बताता हूँ,
बीमा एजेन्ट है वो,
पॉलिशी मर्चेन्ट है वो,
उसकी है विशिष्टता,
आपके भविष्य का,
चाहे–अनचाहे भयावह चित्र खैंचना,
बातों ही बातों में कोई जाल फेंकना।
मिले यदि कुँवारा कोई,
बात समझाता है,
कम्पनी का अपनी
यह नारा दोहराता है–
"प्यार जो करते हैं, बीमा कराते हैं,
प्यार करने वालों को लोग आजमाते हैं।"
लैला के कुत्ते का,
होने वाले सालों का,
प्रतियोगिता में उतरे हुए
आशिकों के भालों का,

खौफ दिखाकर,
बरबस डराकर,
मजनू कुँवारे को पालिशी धराता है ,
वो जो हर बार मिलते ही मुस्कुराता है।

मिला यदि विवाहित कोई,
उसको है घेरता,
देकर सहानुभूति,
उसको है छेड़ता,
''आपके कथानक की इतनी प्रस्तावना,
हर पल दुर्घटना की अब है संभावना,
संभव है एक दिन–
बीवी से ऊबकर,
दुःखों में डूबकर,
प्राण अपने त्यागोगे,
प्रीमैच्योर भागोगे,
चैन नहीं पाओगे
मर कर भी देखना,
पीछा नही छोड़ेगा
बीवी का कोसना,
जीवन बीमा के बिना
जीना विवशता है,
बीमाधारकों को
मरने की प्राथमिकता है,
मर कर यदि आपको
पूर्ण सुरक्षा चाहिए,
तो बिना हिचक आज ही
बीमा करवाइये,''
कह कर विवाह को दुर्घटना बताता है,
वो जो हर बार मिलते ही मुस्कुराता है।

पत्नी के प्रेम के प्रति,
जो पति आश्वस्त हैं,
उनके लिए उसके पास
अब नवीन अस्त्र हैं,

बढ़ती महंगाई का
भय वह दिखाता है,
उनको समझाता है–

''क्या करोगे जीकर तुम ?
आँसू रोज पीकर तुम ?
एग्जिट पॉलिशी की बात
करती सरकार है,
सार्वजनिक संस्थानों पर
लटकी तलवार है,
आदत है छूट गई
काम न कर पाओगे,
छूटी अगर नौकरी
तो गम से मर जाओगे,
मरने से पहले
कुछ कर जाओ इन्तजाम,
बीवी–बच्चों के लिए,
मर कर ही आओ काम,''
मरने की सबमें उत्सुकता जगाता है,
वो जो हर बार मिलते ही मुस्कराता है।
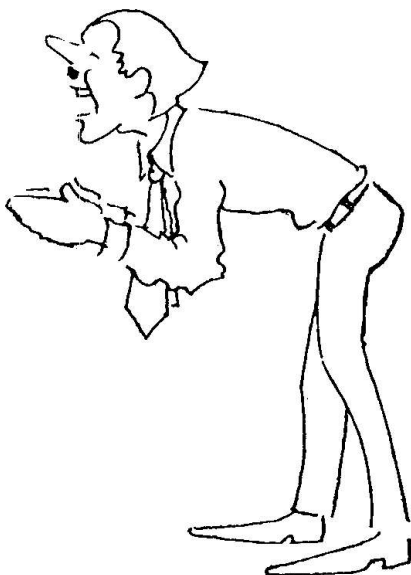
दुःख भरे दिन बीते रे भइया

आदतन जो मेरा मित्र
गमगीन रहा करता था,
मैटिक में फेल हो रहे
चिरंजीवी को लेकर,
गम्भीर रहा करता था,
मिल गया कल अचानक
मुस्कुराते हुए,
गुनगुनाते हुए।

मेरी आँखों में उभरे
सवालों को देख,
एक उन्मुक्त हँसी को
मुझ पर फेंक,
वह बोला–
''क्यों यार! पहचाना नही?''

और मैं झेंप गया।
भेद पाने के लिए,
झेंप मिटाने के लिए,
मैंने बेवजह हँसते हुए पूछा,
''क्या बात है?
चेहरे पर लंबी मुस्कान
नज़र आ रही है!
भाभीजी गई हुई हैं मायके
या होली पर साली आ रही है?"

मित्र नही–नही कह कर मुस्कुराने लगा,
रहस्य और भी गहराने लगा,
उत्सुकता बढ़ाने लगा,
मैंने उसे पुनः टटोला –
''कुछ तो कहो माई डियर !
क्या दिल्ली का मिल गया है–
सरकारी टुअर?

या मनमोहन के बजट के
प्रभाव से,
घटने लगी है मुद्रास्फीति?
तू कह निर्भीक–
मैं मिठाई नही माँगूंगा।''

मित्र ने पुनः नहीं–नहीं दोहराया,
मैं चकराया,
बिना कारण यह आल्हाद!
या इसे हुआ है प्रमाद?
लगता है चिरंजीवी पुनः
फेल हो गया है,
इसीलिए माथा डिरेल हो गया है।

मैंने कांके की ओर जाते
टेम्पो को रोका,
मेरे मित्र ने मुझको टोका,
''ठहर जा ऐ नादान!
प्रसन्नता का कारण
सुन दे ध्यान,
बिहार के नवयुवकों का
हुआ है आह्वान,
दूध–दही–घी खाकर–
बन जाएँ पहलवान,

दॉव–पेंच सिखाने को,
पारंगत बनाने को,
अखाड़ों की जगह–
खोले जाएँगे विद्यालय,
राजधानी में होगा–
इसका मुख्यालय .....''

मैं बीच में ही टोककर बोला,
''ऐ मेरे मित्र भोला!
बीवी–बच्चों का
बोझ ढोते–ढोते,
महँगाई का रोना रोते–रोते
भरी जवानी में
टेढ़ी हो गई थी
हम दोनों की कमर,
उम्र का जो है मुकाम,
वह है ढलती शाम,
फिर भी पहलवानी के प्रति
यह उत्साह!
भई वाह!''

मित्र बात काट कर बोला,
''हँसी मत कर यार!
कहाँ मेरी उम्र,
कहाँ पहलवानी!
यों भी इस उम्र में
दॉव–पेंच सीखकर
अब क्या करूँगा?
ज़िन्दगी के अखाड़े में
कर चुका हूँ आत्मसमर्पण,
अब क्या लड़ूँगा?
मैं तो लड़ने से पहले ही
हार मान लेने का
हो गया हूँ अभ्यस्त;
प्रसन्नता का बस इतना है कारण,

कि पुत्र के भविष्य के प्रति
अब हूँ आश्वस्त;
नई योजना के अंतर्गत
पहलवान विद्यालय खुलेंगे,
नवयुवकों को एडमीशन मिलेंगे,
जो नवयुवक
पूरा कर लेगा प्रशिक्षण,
पुलिस विभाग में
उसके लिए होगा आरक्षण,
अब तो पुत्र की
सेहत के लिए,
सिर्फ एक भैंस खरीदने–
का है अरमान,
पता कर रहा हूँ–
संभवतः इसके लिए भी हो
सरकारी अनुदान,
पीकर भैंस का दूध,
पकड़कर उसकी पूँछ,
पार कर लेगा
हमारा पुत्र भी,
वैतरणी बेरोजगार की,
जय बोलो सरकार की।''

मेरा दिमाग है शक्की,
मैं बोला,
''यार! मत समझ तू बात पक्की,
स्कीम फेल भी हो सकती है,
डिरेल भी हो सकती है,
यों भी भैंस का असली दूध
जिगर वालों को ही
पचता है,
पानी मिला दूध पीना,
हम सबकी
विवशता है।''

बिना मेरी बात पर दिए ध्यान,
मित्र ने आगे छेड़ी तान
''पहलवानों का भविष्य है पक्का,
कह रहे हैं हमारे कक्का,
साल–दो साल में
होते रहते हैं चुनाव,
पहलवानों का
बना रहेगा भाव,
स्कीम फेल भी हुई–
तो क्या ?!
डिरेल भी हुई तो क्या?!
सेहत यदि बना लेगा,
छुटभइयों के साथ रहकर,
जब नाम कुछ कमा लेगा,
किसी–न–किसी
अगड़ी–पिछड़ी पार्टी का कोई नेता,
अपना चेला बना
लेगा।
यदि होनहार निकला,
तो विश्वास है पक्का,
समय आने पर,
देकर सबको धक्का,
मंत्री–पद हथिया लेगा,
मेरी सात पुश्तों को
पार यह लगा देगा।''

यह कह कर मित्र पुनः
मुस्कुराने लगा,
गुनगुनाने लगा,
''दुःख भरे दिन बीते रे भइया,
अब सुख आयो रे....,
रंग जीवन में नया लायो रे....।''

...

होली में

टिक व्टंटी लेकर आया हूँ होली में,
खटमल काट रहे हैं बहुत खटोली में।

नाक बहुत लम्बी है जिनकी, ले आओ,
नोज़–कटिंग सैलून खुला है होली में।

लोक अदालत में वह मुजरिम हाजिर हो,
जो रख कर आया साली को खोली में।

घरवाली है रूठ गई हमसे यारों,
उसको भाभीजान कह दिया होली में।

मजनू हूँ मैं, मेरे दामन का टुकड़ा,
सिलवा दो यारों लैला की चोली में।

करते रहो धमाल मगर देखो रहना,
लेकर आया बटर कौन है झोली में।

पूछा एक GM ने क्या समझा हमको?
हम जनरल मजदूर कह गए होली में।

किसने यहाँ बनाया है ये कार्यालय*,'
होता काँके में या काँटाटोली में।

यूँ तो मिलता पान गेट के है बाहर,
मगर खास सुविधा थी भजन तमोली में।

रंग जमाया ऐसा ''जैन हवाला'' ने,
बड़े–बड़े बदरंग हो गए होली में।

घर पर जाकर यार नार से मत लड़ना,
यदि कह दे रस था रसिया की बोली में।

*CMPDI
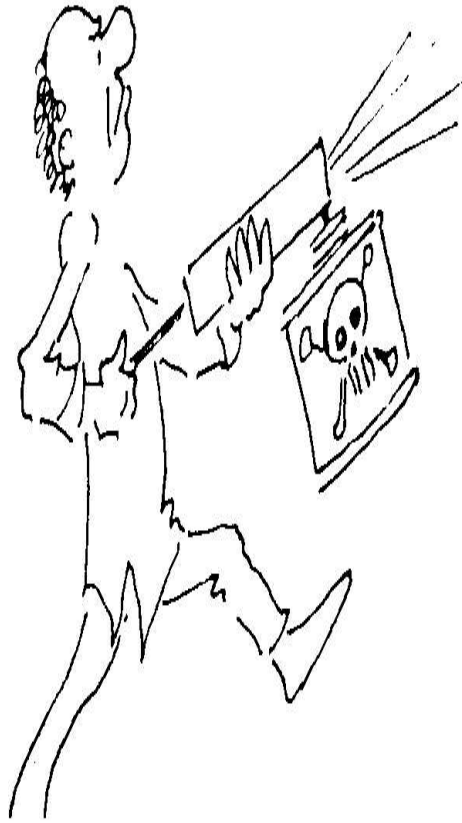
डालो उस पर ख़ाक जो यारों! रूठ गया,
होली की इस मीठी हँसी – ठिठोली में।

कर लेना 'गौतम' को पल भर याद जरा,
यदि अगली होली में हो सिंगरौली में।

...

कुछ सवाल, वित्त मंत्रीजी के नाम

कम करके उत्पाद कर, मनमोहन! हे नाथ!
बदला कब का ले रहे, आप हमारे साथ,
आप हमारे साथ कर रहे कैसी मस्ती,
टी.वी., वी.सी.आर., कार क्यों कर दी सस्ती,
मुरली मधुर बजाकर की कैसी खुटचाली,
मचल गई फिर क्रीम–पाउडर पर घरवाली।

''रुपया सौ प्रतिशत हुआ परिवर्तित'' यह न्यूज,
किसे सुनाकर कर रहे, मनमोहन कनफ्यूज,
मनमोहन कनफ्यूज, यही तो होता है नित,
कर में आधा रुपया होता है परिवर्तित,
आटा, चावल, दाल ले गए बाकी हिस्सा,
नया भला क्या इसमें, वही पुराना किस्सा।

पूछ रहा हूँ अंत में पर्सनल एक सवाल,
महँगाई से जूझ कर, नहीं बचे जब बाल,
नहीं बचे जब बाल, किया क्यों शैम्पू सस्ता,
फूट गया गुलदान, कहाँ रखें गुलदस्ता,
गंजों को बदले में कुछ राहत दिलवाते,
सस्ते में आयातित विग उनको दिलवाते।

...

उल्टा दाँव

उल्टा ही पड़ता रहा, सदा हमारा दाँव,
मिली धूप–ही–धूप बस, कभी न पाई छाँव,
कभी न पाई छाँव, वजन को कम करने को,
एक हफ्ते भर गए, घुड़सवारी करने को,
हाय! हमारा भाग्य, फर्क बस इतना आया,
मैं वैसा ही रहा, और घोड़ा दुबलाया।

...

नियमों पर ध्यान है

लिखते थे कभी जो बस लम्बी कविताएँ,
हमने उन्हें देखा जब लिखते क्षणिकाएँ।

पूछा उन्हें घेरकर, कविजी समझाएँ,
शैली में परिवर्तन किसलिए? बताएँ।

कवि–जी ने हँस कर फिर हमको समझाया,
लम्बी कविताओं से लाभ नहीं भाया।

मानधन के नियमों का रखते हम ध्यान हैं,
प्रति कविता पर मानधन का प्रावधान है।

रचना प्रत्येक जब समान धन कमाए,
लेखिनी को ज्यादा फिर क्यों कोई घिसाए?

...

सम्पादक उवाच

पत्नी के लौटने की पाकर के सूचना,
युवा सम्पादक ने करके विवेचना,
पत्र यह ससुर को लिखा,

''दास हूँ मैं आपका,
कैसे धन्यवाद करूँ
आपके अनुराग का,
आपसे अनुरोध है यह
मेरा कहा मानिए,
रचना यह अपनी
अब आप ही संभालिए।

''गद्य है या पद्य''
यह मैं जान नही पाया हूँ,
पढ़–पढ़ के बार–बार
इसको उकताया हूँ।

आपसे निवेदन है,
अन्यथा न लीजिए,
नई कोई रचना हो
तो उसको भेजिए,
रचना मन–भाई
तो स्वीकृत दी जाएगी,
अन्यथा सखेद वो भी
लौटा दी जाएगी।''

...

प्रति–संवाद

कर जोड़े विनती करूँ, सम्पादक श्रीमान!
मेरे होली–लेख पर किंचित देकर ध्यान,
किंचित देकर ध्यान, अपेक्षित मदद करेंगे,
कॉमा, फुलस्टाप जहाँ न हो, दे देंगे,
नई लेखिका हूँ, स्थापित मुझे कीजिए,
मुझे पत्रिका में थोड़ी सी जगह दीजिए ।

प्रिय लेखिका महोदया, धन्य हमारे भाग्य,
हम विभोर हैं देखकर, साहित्यिक अनुराग,
साहित्यिक अनुराग, मदद को ही बैठे हैं,
जरा दीजिए ध्यान, बात जो हम कहते हैं,
कॉमा, फुलस्टाप भेजिए बस कागज पर,
फिट कर पाएँ लेख एक हम जिसके ऊपर।

...

क्षणिकाएँ

1. पड़ोस की नवयौवना,
   कर गई ठिठोली,
   गाती थी हमें देख जो
   ''होली.....होली....''
   फागुन के पहले ही,
   साजन की होली ।

2. साहित्यिक सभाओं में
   जब–जब वे खड़े हुए
   लेकर डंडे;
   रचना के क्षेत्र में
   गाड़ गए,
   नए झण्डे।

3. पत्नियों के मुख–कमल पर
   एक राय आम है,
   ''यह विविध भारती का
   पंचरंगी प्रोग्राम है।''

4. कवि सम्मेलन में,
   एक कवि
   माइक पर आकर बोला,
   ''एक पद है''
   श्रोतागण चिल्ला उठे,
   ''कहाँ है?''

5. उन्होंने वोट
यह कहकर माँगा,
''आपके गाँव के अधूरे विद्यालय को
कुछ और बनवा देने का
मेरा वादा है,
क्योंकि अगली बार भी,
इसी विद्यालय के नाम पर,
वोट माँगने का इरादा है।''

...
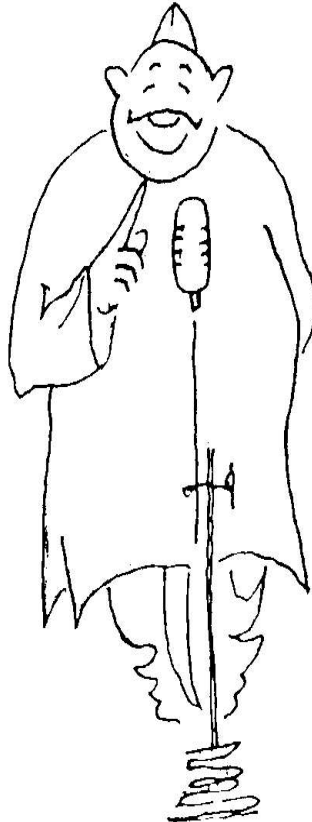
मुकाबला

पिछड़े राज्य से उड़ कर
एक प्रगतिशील युवा कबूतर,
ऊँची उड़ान भर कर,
दिल्ली के ऊपर
मंडराने लगा,
चक्कर लगाकर थक गया,
तो कुतुबमीनार पर बैठ कर,
सुस्ताने लगा।

वहॉ बैठा था
एक वृद्ध कबूतर,
उसने पूछा पंख फड़फड़ाकर,
''वत्स! कहाँ से हुआ है आना?
किधर है तुम्हारा ठिकाना?''
परिचय प्राप्त कर दोनों
गुटरगूँ–गुटरगूँ बतियाने लगे ।

तभी वृद्ध कबूतर बोला दंभ से
''दिल्ली हमारी, सबसे है न्यारी,
ऐ पिछड़े राज्य के कबूतर,
क्या ओपीनियन है तुम्हारी?''

युवा कबूतर चिढ़ कर बोला,
''यूँ ताना मत दीजिए।
करना है मुकाबला
तो बराबरी का कीजिए।
पचास वर्षों से है
दिल्ली राजधानी,
पचास महीनों के लिए ही,
हमारे राज्य की राजधानी को

मौका दीजिए।
हम दिखा देंगे,
कैसे जमती है
हथेली पर सरसों,
जब चाहो परख लो,
आज, कल या परसों।
सारे देश में
विकास की आँधी
चला देंगें;
जो दिल्ली न कर पाई,
वह करके दिखा देंगे।

देखकर युवा कबूतर का तेवर,
वृद्ध कबूतर ने घबराकर,
मुस्कुराहट का आवरण डाला,
बात को कुछ यूँ संभाला,
"बात को किधर मोड़ रहे हो?
राजनीति के साथ
विकास को जोड़ रहे हो?
राजनीति में दिल्ली का
अलग है मुकाम,
जन–जन करता है इसे प्रणाम,
मुकाबला क्या करेगी
तुम्हारी राजधानी?!
कहाँ उपन्यास और कहाँ कहानी?!"

पिछड़े राज्य का युवा कबूतर
और चिढ़ गया,
भिड़ गया,
"जाइए, किसी और को बरगलाइए।
आप क्या उपन्यास लिख पाएँगे,
अपना दूध–दही
नाली में बहाकर,
तब योगहर्ट खिलाएँगे।
खिलाकर केंटकी चिकेन,
कब तक करिएगा इंटरटेन?!
हमी लोग
दूर की कौड़ी लाते हैं,
गंगाजल बेचकर
डालर कमाते हैं।"

डिफेंसिव हो गया
दिल्ली का वृद्ध कबूतर,
प्यार से चोंच मिलाकर
उसने फरमाया,

''माना, गंगाजल के मामले में
कर गये हो स्कोर,
परन्तु सत्ता के दाँव–पेंच हैं
कुछ और,
नही सधेगा यह
गड़बड़झाला,
यहाँ ही होता है
बड़ा–बड़ा घोटाला,
राष्ट्रीय स्तर पर
होता है घात–प्रतिघात,
आप करो
राज्य स्तर की बात।''

युवा कबूतर ने चोंच को छुड़ाया
और गुर्राया,
''खबरदार! अगर और शोर मचाया।
हर स्तर पर हम
कीर्तिमान खड़ा कर सकते हैं,
आप जितने पर
उछल–कूद करते हैं,
उससे ज्यादा चर कर,
हमारे अधिकारी मात्र हँसते हैं।
नही होता है विश्वास
तो मौका दीजिए,
आप दिल्ली वाले
दांतों में उँगली दबा लेंगे,
जिद पर आ गए हम तो,
रिजर्ब बैंक ही चबा लेंगे।''

...

ढूँढ़ते रह जाओगे

मुक्त अर्थ–व्यवस्था का
देखने को चमत्कार,
हम घूमने गए बाजार।

आयातित उत्पादों से
सजी हुई थी
हर दुकान,
हमने दिया ध्यान।

अमरीकी टूथपेस्ट सजा था,
दाँतों की मजबूती के लिए,
अंग्रेजी कपड़ा टंगा था
भारतीय धोती के लिए,
क्रीम–पाउडर–लिपिस्टिक की
दुकान पर,
मचा था कोहराम,
माल खत्म होने के भय से,
महिलाओं में
हो रहा था संग्राम।

आगे एक दुकान पर,
जापानी कार,
टी.वी., वी.सी.आर.
सभी था उपलब्ध,
सूट–बूट वाले खरीद रहे थे,
लंगोटी वाले खड़े थे स्तब्ध।

हम अपनी खाली जेब टटोलते
आगे टहल गए,
बाजार के अन्तिम छोर की ओर,
मायूस कदमों के साथ
निकल गए।

उधर एक दुकान पर
भीड़ थी अपार,
हो रही थी
धक्का–मुक्की
और जूत–पैजार;
हमने गौर से देखा –
सभी थे भीड़ का हिस्सा,
हमें भी लग गया
एक–आध घिस्सा,
तो हम
छिटक कर
दूर खड़े हो गए,
और
सोच में पड़ गए,

'लगता है यहाँ
दूसरे ग्रह से
कोई नया उत्पाद आया है,
इसीलिए उपभोक्ता
इस कदर बौराया है।'

तभी हमारी नज़र में,
दुकान के ऊपर लगा
बड़ा–सा,
विज्ञापन आया।
हमने चश्मे से होकर
गौर फरमाया।

लिखा था उस पर,
मोटे अक्षरों से–

''विरोधी नेता की
अधिक दागदार कमीज से
क्यों घबराते हो।

हमारा विख्यात
भ्रष्टाचार ब्रांड साबुन
क्यों नहीं लगाते हो?!
हमारा है दावा,
यदि हमारे साबुन को
नई सफेद कमीज पर भी
एक बार लगाओगे,
तो सफेदी?!!
ढूँढ़ते रह जाओगे,
ढूँढ़ते रह जाओगे।"

...

मजबूरी

नपे–तुले कदमों से चलके,
विरोध की राजनीति करके,
सत्ता के गलियारे में,
मझधार से किनारे में,
जब आ लगा–
हमारे पड़ोसी का लड़का,
हमारा दिल भी फड़का।

अपने कपूत को ले जाकर,
उससे मिलवा कर,
हमने फेंटा,

"सुनो बेटा!
इसे बनाकर शागिर्द,
रखना इर्द–गिर्द,
तुम्हारे साथ खेलते–खाते,
यह भी तर जाए,
पिछले जन्म का यह पाप,
इस जन्म में धुल जाए।"

पड़ोसी के लड़के ने
हमें पास बुलाया,
और कान में फुसफुसाया,

"अंकल जी!
जरा ठहर जाइए,
इस फटे ढोल को
कुछ दिन और बजाइए।
फिलहाल तो डौल नही है
अपने ही खेलने–खाने की,
अभी तो हवा चल रही है,
न्यायिक जाँच और जुर्माने की।"

...

अधीरता

खेलकूद के मैदान में
जब भारत का प्रदर्शन,
निरन्तर रहा फीका,
तो नैतिक जिम्मेदारी मानकर,
खेलमंत्री ने भेज दिया इस्तीफा।

ऐसी नैतिकता से होकर प्रभावित,
प्रधानमंत्री हो गए उत्साहित,
कर डाला मंत्रीमंडल में फेरबदल,
खेलमंत्री ने किया
शहरी विकास मंत्रालय पर दखल।

इधर हमारी नैतिकता भी
करवट ले रही थी,
एक बात जो दिल में चुभ रही थी,
उस पर उनका खीचा ध्यान–
''सुनिये श्रीमान!
विश्व में
प्रदूषण में
क्यों है दिल्ली का
चौथा स्थान?''

बात सुनकर हमारी
वो अधीर हो गए,
मुस्कुरा रहे थे
गंभीर हो गए,
उन्होंने खास घंटी को बजाया,
उनका निजी सचिव दौड़ कर आया,
मंत्रीजी उस पर चिल्लाए,
''कोई हमें बताए,
किधर जा रही है
हमारे देश की गड्डी!

जिधर देखो
उधर ही फिसड्डी!
मुख्य सचिव के पास जाइए,
उनको बताइए,
कि ये है हमारी विनती,
कहीं तो कराएँ
पहले स्थान पर गिनती;
वे तुरंत एक योजना
बनाकर लाएँ
ताकि जल्दी से हम
अपनी दिल्ली को,
प्रदूषण में
पहला स्थान दिलाएँ।

...
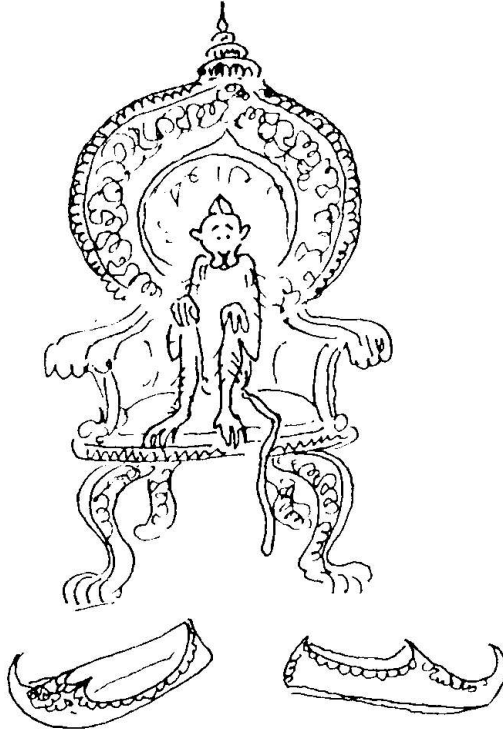
अपना – अपना रोना

एक दिन
कृपणों के सख्त आलोचक,
सफल मंच आयोजक,
मिले हाथ जोड़कर
हालचाल छोड़कर,
बिना लागलपेट के बोले–

''अपने व्यवस्थापकों को
पटाइए,
फिर हमें आजमाइए,
जमने – जमाने की
देते हैं गारंटी,
यदि गर्म हो जाए
हमारी अंटी,
तो इस होली पर
रंग जमा देंगे,
एक सफल हास्य कवि सम्मेलन
करवा देंगे;
बड़े माकूल रेट हैं हमारे,
हर स्तर के कवि हैं
जेब में हमारे,
आपको भी पढ़वा देंगे,
न आती हो यदि कविता,
तो आपके लिए
मुफ्त में लिखवा देंगे;
दस हजार एक में
तीन घण्टे का सम्मेलन
करवाएँगे,
दो–चार घिसे हुए कवियों को,
बुलवाएँगे;

पच्चीस हजार एक मिले,
तो महफिल
जमा देंगे,
शैलजी जैसे
भारी – भरकम कवियों से,
मंच ही तुड़वा देंगे,
और यदि
पचास हजार एक दे दें तो,
आपको निश्चिंत कर देंगे,
शाम से सुबह
हम अकेले दम कर देंगे।''

हम खासा प्रभावित हुए ,
कुछ – कुछ उत्साहित हुए,
तभी हमें कुछ याद आया,
और हमने उन्हें
यह दुखड़ा सुनाया,

''सुनो, भाया!
यूँ तो आप हमें
खासा लुभा रहे हैं,
पर हम कुछ कहते हुए
लजा रहे हैं,
हमारे इलाके में
हर स्थानीय कवि
चाहे बड़ा हो या छोटा,
महसूस कर रहा है
श्रोताओं का टोटा,
पिछले कवि सम्मेलन की
याद अभी है ताजी
संख्या में श्रोताओं से
हम कवियों ने
मारी थी बाजी।

आप एक काम करें,
श्रोताओं के लिए भी
तय करें,
कुछ माकूल दरें,
हम मुनादी करा देंगे,
कवि और कविताएं
हों चाहे जैसी,
कवि सम्मेलन हम सफल करा देंगे।

...

फगुनाई ग़ज़ल

फागुन में ठण्डी राख भी अंगार बनी है,
बेधार जो छुरी थी, वो तलवार बनी है।

छक्के छुड़ा रहे हैं नए दौर के बच्चे,
चौका लगाने वाली भी 'सरकार' बनी है।

रोटी की जगह चारा चबाना शुरू करें,
सुनते हैं ये खुराक असरदार बनी है।

इस दौर में अब लेन–देन शिष्टाचार है,
नीयत सभी की देखकर बटमार बनी है।

लिख लो हमारा नाम भी एडवांस मुल्क में,
शिक्षा यहाँ भी अब बड़ा व्यापार बनी है।

पूँजी निवेश के लिए अच्छा ये क्षेत्र है,
कीचड़ की यहाँ मांग लगातार बनी है।

वी.आई.पी. उतना ही बड़ा मानिए उसको,
जितनी कमीज उसकी दागदार बनी है।

कुर्सी में विटामिन हैं ये निष्कर्ष है मेरा,
काया जो इसपे बैठी, वजनदार बनी है।

उम्मीद लगाए रहो, चल जाए ये शायद,
करके करोड़ों खर्च ये सरकार बनी है।

माना कहीं की ईंट है रोड़ा कहीं का है,
बालू पे इमारत ये शानदार बनी है।

आधी सदी के बाद जो आई है सामने,
सूरत वो सबके सोच की हकदार बनी है।

...

मूल्यों का दर्द

हम सफर में थे,
फिकर में थे,
तभी सहयात्री एक पूछ बैठा,

''क्यों अलग बैठा हुआ है
यार! ऐंठा?
परंपराओं का नहीं
क्यों कर रहे निर्वाह बोलो?
साथ के सहयात्रियों से
कुछ तो बोलो।
आज के मुद्दों की
बखिया तुम उधेड़ो,
जिससे सरोकार न हो
उस विषय पर बात छेड़ो।
कुछ तो बोलो,
या सफर तुम कर रहे हो
आज पहली बार, बोलो?''

हमने फरमाया,

''महोदय!
'सफर' करना तो
मुकद्दर में है अपने,
'बे–सफर' इस मुल्क में हैं
लोग कितने?''

इतना सुनकर उसने पूछा,

''हो कहाँ तुम काम करते?
आज के माहौल में क्यों
मुल्क की हो बात करते?

अपनी 'सफरिंग' का बयाँ कर,
मुल्क की 'सफरिंग' धुँआ कर,''

और कुछ अंदाज करके,
धीरे से हमराज करके,
उसने फरमाया,
''पहुँच मेरी बहुत ही
दूर तक है,
मंत्री जी मशहूर तक है।
तुम बताओ–
कष्ट क्या है?''

हमने धीरे से कहा,
''चिंतित हूँ लेकर मूल्यों को।
कैसे काबू में करें हम?
किससे अब विनती करें हम?''

हँसके वह बोला,
''अरे! क्यों रो रहे हो?
फिक्रे–महंगाई में –
दुबले हो रहे हो?
घट गई उत्पाद दर है,
कम हुआ आयात कर है,
कुछ दिनों धीरज धरो तुम,
कुछ प्रतीक्षा बस करो तुम,
मूल्य गिर जाएँगे सारे,
दिन बहुर जाएँगे प्यारे,
खर्च न तनख्वाह होगी,
जिन्दगी इन्सान की
देखोगे बेपरवाह होगी।
नोट हर कोई गिनेगा,
मुल्क अपना देखना,
फिर सोने की–
चिड़िया बनेगा।''

बात उसकी काट कर
हमने बताया,
''बढ़ती महँगाई का दुःख
किसको है, भाया!
इसका है अभ्यास हमको।
बढ़ते मूल्यों की जगह पर
गिरते नैतिक मूल्यों पर,
हो रहा है दर्द हमको।
लोग करते हैं इशारे –
'क्यों नहीं थोड़े समय में
हम भी जादा–और–जादा
माल जीवन में बनाते?
ताक पर आदर्श रखकर
क्यों नही पैसा कमाते?
सब तरफ यह हो रहा है,
तू समय क्यों –
खो रहा है?'''

सहयात्री सुनके यह बोला,
''यह नसीहत तो भली है,
किसलिए फिर आपकी
काया गली है?''

हमने लज्जित होके फरमाया,
''नही दिल मानता है।
प्रश्न करता है
सभी से एक उत्तर
मांगता है –

सात पुस्तों के लिए
एक पुस्त में ही,
आदमी संभव है
कर लेगा कमाई,
संस्कारों को कमाने

के लिए क्यों,
सात पुस्तों का समय
लगता है, भाई!?”

खीझ कर सहयात्री
चिल्ला के बोला,

''है कोई,
जो गाड़ी की ज़ंजीर खीचे!
आ गया डब्बे के अन्दर
एक पागल,
इसको मिलकर के
उतारो यारों! नीचे ।''

...

कुएँ में भाँग

आधुनिकता भी है इसमें, यह समय की माँग है,
हम बियर अब पी रहे, क्योंकि कुएं में भाँग है।

बीस में आफत करी, इक्कीस में अब देखिए,
क्या करेगी यह हवा, खामोश हर पंचांग है।

रूठती ललिता कभी है, खीचती ममता कभी,
यदि अटल ऐसे में हो जाए विकल, क्या रॉंग है?

अब न फागुन गुदगुदाता, न ठिठोली फाग की,
साल भर अब मुल्क में होली का चलता स्वाँग है।

रात लंबी हो गई है या है कोहरे का असर!
मुल्क में मुर्गा कोई देता नही अब बाँग है।

छोड़कर रोटी चले चरने को सब, यह जानकर,
जेल में रहती हमेशा मर्द की एक टाँग है।

एक तिहाई पर भला हुज्जत करें हम किसलिए,
उसका मैं सौ फीसदी हूँ, जो मेरा अर्धांग है।

फैसला करना नही आसान अब 'गौतम' यहाँ,
आदमी बेहोश है, मुर्दा है या विकलांग है?

...

राम भरोसे

बैठे हैं जो कतार में सब राम भरोसे,
रोटी के बदले मांग रहे हैं वो समोसें।

सत्ता में जो नहीं रहे, चिल्ला रहे हैं वो,
पहले मेरी सरकार ने व्यंजन थे परोसे।

संसद की कैंटीन में वो बात नहीं अब,
सस्ते में नही मिलते हैं इडली–बड़े–डोसे।

सत्ता बदल गई है तो झगड़ा है लाज़िमी,
खायेगा कौन आम कौन गुठली को चूसे?

रुपये में पैसे पंद्रह थे मिलते गरीब को,
खाते में अब गरीब के भेजे हैं सौ पैसे।

ये धूप का चश्मा उतार कर तो देखिये,
उड़ते हैं परिंदे गगन पर अपने परों–से।

अब और क्या सिखलाएगा 'गौतम' जनाब को,
थोड़ा–सा जी के देखिये सरकार भरोसे।

...

Oh! Dear WhatsApp

(1)

कभी कभी मेरे दिल में ख़याल आता है,
तुझे बनाया गया है जनाब मेरे लिए।
अगर न होता तू, हम जैसे लोग क्या करते?
सुबह से सबको जगाया है तूने मेरे लिए।।

कभी कभी मेरे दिल में ख़याल आता है,
अगर न होता तू, तो लोग रोज क्या करते?
हँसाता कौन, किसे ज्ञान बाँटते ज्ञानी,
यूँ घर में बैठकर फोकट में मौज़ क्या करते!!

कभी कभी मेरे दिल में ख़याल आता है,
सुबह से शाम तलक करते भी तो क्या करते!!
वही अख़बार, वही TV, सोना और खाना,
यूँ जिन्दगी गुज़ार देते और क्या करते!!

कभी कभी मेरे दिल में ख़याल आता है,
बनाया जिसने तुझे, रोज दुआ दूँ उसको,
बनाया जिसने है यह ग्रुप, उस नेक बन्दे को,
उम्रदराज़ हो यह रोज दुआ दूँ उसको।

(2)

मार्निंग मार्निंग सब करें, मार्निंग उठे न कोय,
आठ बजे के बाद ही, मार्निंग सबकी होय,
मार्निंग सबकी होय, मिले बेड पर जब बेड–टी,
लेकर मोबाइल फिर सब जाते हैं पॉटी,
'गौतम' उनको आज दे रहा हूँ यह वार्निंग,
खबरदार पॉटी से मत भेजें गुड मार्निंग।

मार्निंग उठिये चार बजे, लेकर प्रभु का नाम,
पेट साफ कर कीजिये योगा और व्यायाम,
योगा और व्यायाम, साथ कुछ ध्यान कीजिये,
फिर ठंडे जल–से घिस–घिस स्नान कीजिये,

'गौतम' तन–मन स्वच्छ, बनाकर फेस चार्मिंग,
WhatsApp पर लिखिये फिर सबको गुड मार्निंग।

(3)

मैं खुद से पूछता हूँ यदि न व्हाट्सएप होता,
ख़याल–ए–दोस्त से होता तो कितना गैप होता?

किसी के हाथ में होता न अगर मोबाइल,
बगल में दोस्त ही होता न कोई चैप होता।

सहेजता मैं सौ जतन–से धुँधली तस्वीरें,
अगर प्रोफाइल में उसका न कोई स्नैप होता।

अगरचे सोचते हम तुम, तो कुछ जुदा कहते,
किसी की पोस्ट में इतना न ओवरलैप होता।

कहाँ इस वर्चुअल दुनिया में खो गया 'गौतम',
हम उसको ढूँढते यदि पास कोई मैप होता।

(4)

हँसाया रोज किसने कितना यह मैं याद रखता हूँ,
है गायब कौन कितने दिन से, यह भी याद रखता हूँ।

न जाने कब कहाँ किस पल तबीयत ढीली हो जाये,
घरेलू नुस्खे जो भेजें गये वो याद रखता हूँ।

नई फोटो के संग good morning कहते हैं जो हर दिन,
वो जिस दिन भूल जाते हैं, मैं वो दिन याद रखता हूँ,।

कलेजे को भरी गर्मी में जो अहसासे–ठंडक दे,
मैं ऐसे बर्फ के गोलों के चर्चे याद रखता हूँ,।

बहुत कम शब्दों में कह देती हैं जो दिल की बातों को,
मैं अपनों से मिली स्माइलियों को याद रखता हूँ

...

नोटबंदी

(1)

है दौर नया दोस्त, सवा रुपया बचाओ,
अब पाँच सौ–हजार ही मंदिर में चढ़ाओ।

इतरा रहे थे पाँच सौ का नोट दिखाकर,
उनको दिखा के सौ का फटा नोट, चिढ़ाओ।

सीने का जिसका माप है छप्पन, उसे न छेड़,
पाजामा उतारा है अभी, कच्छा बचाओ।

माया के फेर में ही थी काया बिगड़ गई,
माया से मुक्त होके चलो स्वास्थ्य बनाओ।

कहते ही हैं 'हर गंगे' फिसलने के बाद लोग,
तुम भी फिसल गये हो अगर, गंगा नहाओ।

बेफिक्र होके सोने के दिन आ गये 'गौतम'
माया का मोह फिर न तुम दिल में जगाओ।

(2)

चिंता न करें कैसे कटे दो हज़ार में,
डिजिटल करें भुगतान, ये है इख़्तियार में।

हमको न बैंक से है न मोदी से है गिला,
जीने की है आदत हमें पेंशन–पगार में।

शादी न टले, खाने की दावत भी न टले,
आशीष के संग दीजिये एक चेक व्यवहार में।

पुरलुत्फ ये माहौल है, माकूल ये होगा,
ठन–ठन गोपाल बन के घूमिये बाजार में।

बैठा है जिसपे जेटली, उस शाख को सलाम,
कोई खलिश नहीं है दिल–ए–लालाज़ार में।

लेकर के सभी आए हैं दिन ज़िन्दगी के चार,
दिन और न मिलेंगे किसी को उधार में।

कतरा रहे हैं लोग क्यों लम्बी कतार से
जाने के लिये कौन नहीं है कतार में।

मानेंगे ख़ुशनसीब हैं हम, दफ्न से पहले,
कंधे जो मिलें चार हमें कू–ए–यार में।

(3)

दाँतों तले दबा कर उँगली, सबने कहा 'नमूना है',
सारी दुनिया में खोज़ा मोदी–का तोड़ कहूँ–ना है।

मुद्रा के संग देखो कैसे सबकी मुख–मुद्रा बदली,
पिट कर, ताली पीट रहे हैं, अंतस्तल पर सूना है।

बाज़ीगरी गजब की उसकी माल किसी–का छुआ नहीं,
माया सबकी माटी कर–के मगर लगाया चूना है।

खिसियानी बिल्ली बन कर अब नेता खंभा नोच रहे,
निर–धन होकर निर्धन के प्रति उन्हें दर्द अब दूना है।

हुए एकजुट सारे दाने, जिनके छिलके उतर गये,
लेकिन भाड़ नहीं फूटेगा, जिसमें उसने भूना है।

'गौतम' हल्ला करो सदन में या विरोध चौराहों पर,
जन–जन को ले साथ चला वह, उसे चाँद को छूना है।

...

लॉकडाउन संस्मरण

(1) शराब बिक्री पर रोक हटाने पर

मदिरालय खुल गये सुना तो मचल गया पीनेवाला,
कितनी बड़ी कतार किधर है, पूछ रहा वो मतवाला,
मिसगाइड करने वालों की कमी नही, मेरी मानो,
पहली मिले कतार, पकड़ लो, पा जाओगे मधुशाला।

छप्पन दिन के बाद हटाया है मदिरालय से ताला,
मन को बहलाने की खातिर क्या–क्या सबने कर डाला,
झाड़ू–फटका–पोछा–बर्तन क्या–क्या करके दिन बीते,
अपने दीवानों को अब आमंत्रित करती मधुशाला।

हाला से मिलने की खातिर है बेचैन तेरा प्याला,
मधु से अपनी प्रीति निभा, मत देख किधर है मधुबाला,
ब्राण्ड ना देखो, दाम ना देखो, ठर्रा हो या अंग्रेजी,
आज प्रेम से पीना पहला ध्येय कह रही मधुशाला।

Zomato से मंगवाते थे तुम पिज्जा इटली वाला,
होम डिलीवर व्हिस्की करता है अब **Zomato** वाला,
मनपसंद चखना घर पर मंगवा सकते हो **Swiggy** से,
सरकारी सुविधा से देखो अब घर घर में मधुशाला।

(2)

तुनक तुनक धिन धा धा।
नौ मन तेल निचोड़ा मेरा, कब नाचेगी राधा?
टेढ़ा आंगन चोखो चौरस, अब सम्मुख क्या बाधा?
यायावर मन है विद्रोही घर से बाहर भागा।
वर्दी वाले ने धर बाजू, तोड़ा सबका कांधा।
तीन चरण के लॉकडाउन में जिसने मन न बांधा।
सरे–राह फिर 'गौतम' होगा तुनक तुनक धिन धा धा।

(3)

खिसकती जा रही रुख़ से नक़ाब आहिस्ता–आहिस्ता,
दिखाएंगे वो तेवर लाजवाब आहिस्ता–आहिस्ता।

पिला कर चाय मुझको छीलने को प्याज़ देते हैं,
निकलने लगते हैं आँसू जनाब आहिस्ता–आहिस्ता।

मुझे पकड़ा के घर के काम की फेहरिस्त कहते हैं,
कटेंगे सारे सेहत के अज़ाब आहिस्ता–आहिस्ता।

इलू (ILU) से मुबतिला हम थोड़ा सरके, वो डबल सरके,
मोहब्बत में फटे सारे हुबाब आहिस्ता–आहिस्ता।

है सैनेटाइज़र में एलकोहल फीसदी सत्तर,
गटक कर हमने देखा माहताब आहिस्ता–आहिस्ता।

परेशां क़ब्ज़ से होकर सड़क पर जो टहलते हैं,
पुलिसवाला उसे देता जुलाब आहिस्ता–आहिस्ता।

पड़ा रहता हूँ सारा दिन, लिखा करता हूँ कुछ यूँही,
मैं कर लेता हूँ दिन सारा खराब आहिस्ता–आहिस्ता।

जो गुज़री है हमारे साथ अबतक तक तीन चरणों में,
लिखा है उसका ही लब्बो–लुआब आहिस्ता–आहिस्ता।

यूँही होता रहा गर लॉकडाउन का करम 'गौतम',
बनेगी गज़ल की मोटी किताब आहिस्ता–आहिस्ता।

(4)

मिलने में जब मजबूरी है,
'गुड मार्निंग' बहुत ज़रूरी है।

चाहे घर आए मेड नही,
कोरोना की हो रेड नही,
थेथर है, बहुत गुरूरी है,
'गुड मार्निंग' बहुत ज़रूरी है।

घर में बर्तन–झाड़ू–पोंछा,
करना होगा, कब था सोचा,
पर रखना अभी सबूरी है,
'गुड मार्निंग' बहुत ज़रूरी है।

मिल कर होगी अब बात नहीं,
क्योंकि अच्छे हालात नहीं,
ऐसे में बेहतर दूरी है,
'गुड मार्निंग' बहुत ज़रूरी है।

न बेहिसाब कोई घूमे,
न बेनक़ाब कोई घूमे,
देखो, यह जीत अधूरी है,
गुड मार्निंग बहुत ज़रूरी है।

पत्नी को मानो मधुबाला,
उसके हाथों से ले प्याला,
बोलो, यह चाय अंगूरी है,
गुड मार्निंग बहुत ज़रूरी है।

घर के अन्दर ही वॉक करो,
WhatsApp पर सबसे बात करो,
जीवन में हास्य ज़रूरी है,
'गुड मार्निंग' बहुत ज़रूरी है।

माना ये रात अन्धेरी है,
होगा प्रभात, कुछ देरी है,
देखो वो क्षितिज सिंदूरी है,
'गुड मार्निंग' बहुत ज़रूरी है।

(5)

कोरोना के वायरस से फैला संताप,
निंदा–रस–सेवन बिना मनवा करत विलाप,
मनवा करत विलाप, हरतरफ है पाबंदी,
सोशल–डिस्टेंसिंग ने की है नाकाबंदी,
मोदीजी कह रहे हृदय में धीर धरो–ना,
देओ बददुआ कही बचे–ना ससुर कोरोना।

कोरोना–के सामने सभी हो गये फेल,
OPEC वाले बेचते बिन पैसे के तेल,
बिन पैसे के तेल, नीम पर चढ़ा करेला,
पाबंदी है वाहन पर, यह कैसा खेला?
बिन परमीशन घर–के बाहर पैर धरो–ना,
देओ बददुआ कही बचे–ना ससुर कोरोना।

कोरोना की मार से, सेंसेक्स हो गया चित्त,
निफ्टी है बौरा गया, हिली अर्थ की भित्त,
हिली अर्थ की भित्त, बचें कैसे आफत से,
रहे पसीने छूट, डर रहे हैं आगत से,
सब जन करें गुहार, जतन कुछ कोई करो–ना,
देओ बददुआ कही बचे–ना ससुर कोरोना।

कोरोना के सामने ट्रम्प हो गये पस्त,
इटली–फ्रांस–ब्रिटेन में फेल हैं बंदोबस्त,
फेल हैं बंदोबस्त, है गुड मोदी की सेंसिंग,
सबको करके बंद करी सोशल डिस्टेंसिंग,
'गौतम' हो कर–बद्ध कह रहा धीर धरो–ना,
देओ बददुआ कही बचे–ना ससुर कोरोना।

...

हिंगलिस गज़ल

इस दौर ने हर गांव को Town बना दिया,
साड़ी को काट–छांट के Gown बना दिया।

'**सुनते हो**' कहते–कहते लो Grammar बदल गई,
Pronoun जो था उसने है Noun बना दिया।

इक Virus से सबकी ऐसी–तैसी हो गई,
जो तन के खड़े थे उन्हें Down बना दिया।

पीकर Bacardi वो लगे भांगड़ा करने,
बोतल को सर पे रखा और Crown बना दिया।

Tell me करें इज़हारे–मोहब्बत, तो किस तरह,
माथे पे Lockdown ने Frown बना दिया।

Life पे अपनी फरव़ बहुत करता था 'गौतम'
इस दौर ने उसको भी है Clown बना दिया।

...

ख़याल–ए–वबाल

कभी अकेले में उनका ख़याल आता है,
तो साथ लेके उम्र का सवाल आता है।

जो गाल थे कभी अंगूर हो गये किसमिस.
मगर जो छेड़ो तो उन पर गुलाल आता है,

कोई तो बात है फागुन में इसके आते ही,
कढ़ी जो बासी है, उसमें उबाल आता है।

वबाल–ए–जान नामुराद दिल को चैन नहीं,
ख़ुदा से पहले इश्क का खयाल आता है,

हमारे दिल में गुदगुदी–सी होने लगती है,
जो दाल में कभी लंबा–सा बाल आता है।

ख़ुदा न झूठ बुलाये, हमें फुरसत ही नहीं,
WhatsApp पर रोज इतना माल आता है,

कभी फुरसत मिली तो पूछेंगे ख़ुदा से हम,
क्यों बेवजह ये ख़याल–ए–वबाल आता है।

...

...

बेफ़िक्र गज़ल

मार ठहाके जीते हैं हम,
कौन कह रहा रीते हैं हम।

बिना बहस के हार मान कर,
हर दिन बाजी जीते हैं हम।

जाम उठा ले अपना साकी,
अब आँखों से पीते हैं हम।

नीम नहीं हम, नहीं करेले,
पर सच है, कुछ तीते हैं हम।

किसमिस मेरा यार हो गया,
कुछ पिलपिले पपीते हैं हम।

चूहा बन सब बिल में बैठे,
जो कहते थे चीते हैं हम।

एक दिन याद बहुत आयेंगे,
माना बिसरे–बीते हैं हम।

...

कसरती ग़ज़ल

जब तक है दिल धड़क रहा हसरत किया करें
मुर्गे से पहले जाग कर कसरत किया करें।

माना कि कैशलेस हो मगर ऐशलेस न हो,
दिल को बदल के दिल से, तिजारत किया करें।

मुश्किल नहीं लगेगा सफ़र, बात मानिये,
जो हमसफ़र है उससे शरारत किया करें।

दुश्मन भी मचल जाये और सदका उतार ले,
कुछ इस अदा से आप अदावत किया करें।

गर हो खबर वो पूछने आयेंगे हाल–ए–दिल,
बीमार दिखाई दें वो सूरत किया करें।

मुरदा समझ न ले कहीं दुनिया तुझे 'गौतम',
हँसने–हँसाने की कोई हरकत किया करें।

...

द्वितीय खण्ड

आलेख

नाम–गौतम........, काम–सम्पादन......., मृत्यु–अकस्मात्..........। संचिका में मात्र इतना ही दर्ज था।

''प्रिय चित्रगुप्त! यह मैं क्या देख रहा हूँ? इस मानव की संचिका अधूरी क्यों है...........?'' भगवानश्री ने चित्रगुप्त से प्रश्न किया।

''क्षमा कीजिए, भगवन!'' चित्रगुप्त ने अचकचाते हुए बताया,''यह मानव अकस्मात् ही मृत्युलोक से पधारा है, इसीलिए इसकी संचिका..''

''परन्तु, आकस्मिक परिस्थितियों से निपटने के लिए तो तुम्हारे यहाँ पूर्ण व्यवस्था रखी गई है।'' भगवानश्री ने चित्रगुप्त से अपना असंतोष व्यक्त किया।

''आप सत्य कह रहे हैं, भगवन्!'' चित्रगुप्त ने विनयपूर्वक स्पष्टीकरण देने का प्रयास किया, '' तथापि होली के अवसर पर हमारे अधिकांश कर्मचारी अवकाश पर गए हुए हैं...... इसीलिए....''

''परन्तु, एक साथ सबको अवकाश भी तो तुम्हीं ने ही दिया होगा, वत्स! क्या तुमने ऐसी स्थितियों का पूर्वानुमान ......''

''नही, भगवन्! परम्परा के अनुसार मैंने भी अपने कुछ विशेष प्रिय कर्मचारियों को ही होली पर अवकाश दिया है; परन्तु शेष ने अप्सराओं के साथ फाग खेलने के लिए बीमारी का बहाना कर के........''

''ठीक है–ठीक है। अब यह तो बताओ कि इस समय किया क्या जाए? इस मानव को यदि और अधिक प्रतीक्षारत रखा जाएगा, तो यह अपने मन में क्या सोचेगा हमारी व्यवस्था के बारे में.....''

''इसके लिए चिन्तित न हों, भगवन्! यह मृत्युलोक का प्राणी भारत भूमि से यहाँ पधारा है; सुना है वहाँ इनके अपने कार्यालयों में ऐसी अव्यवस्था सामान्य–सी बात मानी जाती है; निःसन्देह ऐसी अव्यवस्थाओं का इसे पूर्ण अभ्यास होगा........'' चित्रगुप्त ने भगवानश्री को विचलित होते देखकर उन्हें सहज करने का एक क्षीण–सा प्रयास किया।

''तथापि चित्रगुप्त!, हमें कुछ तो करना ही चाहिए। कर्मचारियों के लौटने तक हम ....'' भगवानश्री अचानक कुछ विचार करने के लिए चुप हो गए। क्षणांश बाद उन्होंने कहा,''तुम एक काम करो, इस मानव का साक्षात्कार लेकर इसकी संचिका को पूरा कर के पहले इसके पाप–पुण्य का लेखा–जोखा निकाल लो, उसके पश्चात तुम स्वयं इसे स्वर्ग अथवा नरक में छोड़ आओ। आशा है कि वहाँ ऐसी परिस्थितियाँ नही होंगी।''

''जो आज्ञा, भगवन्!'' चित्रगुप्त ने संचिका उठाकर बगल में दबाई और अपने कक्ष में प्रवेश किया। वहाँ बैठे प्रतीक्षारत मानव ने चित्रगुप्त को देखकर कहा–

''बहुत देर कर दी आपने!''

''क्षमा कीजिएगा, बंधुवर! आपके इस अनायास आगमन के लिए हम तत्पर नहीं थे, इसीलिए...........''

''कोई बात नही, अब आप किंचित कृपा करें और अपनी कैंटीन से एक कप कॉफी और एक पैकेट सिगरेट मँगवा दें, जमा–जमाया मूड उखड़ गया है.....''

''क्षमा करेंगे, बंधुवर! हमारे यहॉं मृत्युलोक के विशिष्ट व्यसन तो उपलब्ध नही होंगे। हॉं, कहें तो सोमरस प्रस्तुत करूँ?''

''सोमरस.....?! यानी व्हिस्की....?! इम्पोर्टेड है......?!'' मानव का चेहरा चमक उठा।

''इम्पोर्टेड.....?! यह क्या होता है?! क्या यह संस्कृत् का शब्द है?'' चित्रगुप्त ने असमंजस में आकर पूछा।

''अरे.....! इम्पोर्टेड भी नही जानते...?!'' मानव ने चित्रगुप्त की अज्ञानता पर क्षोभ व्यक्त किया, ''इम्पोर्टेड..... यानी विदेशी.... और यह

शब्द आंग्ल भाषा का है, हमारे देश के अभिजात्य वर्ग द्वारा बोली जाने वाली भाषा.......वहाँ इसे बच्चों को घुट्टी में मिलाकर पिलाया जाता है जिससे वे बड़े होकर भूल से भी हिन्दी के माया–मोह में न पड़ने पाएं।

''बंधुवर! यहाँ तो मात्र हमारे देवलोक की ही वस्तुओं का प्रयोग होता है.....'' चित्रगुप्त ने मानव की संचिका को शीघ्रता से निपटाने के लिए उसे बीच में ही टोका,'' अगर आप चाहें तो......?''

''क्या आपके देवलोक में भी उदारीकरण के विरोध में स्वदेशी की क्षुद्र राजनीति चल रही है या आप लोगों में आधुनिक बनने की चाह नहीं है? अच्छा छोड़िए....जो है, वही पिलाइए।''

चित्रगुप्त ने अपनी मेज की दराज में से सोमरस की बोतल और एक स्वर्ण–पात्र निकालकर मानव के सामने रख दिया।

'' आप नही लेंगे?'' एक ही पात्र देखकर मानव ने चित्रगुप्त से पूछा और फिर मुस्कराकर खुद ही बोला,'' शायद आपके देवलोक में भी ड्यूटी के समय नहीं पीने का नियम है, पर हमारे यहाँ तो कुछ कर्मचारी पीकर ही ड्यूटी पर आते हैं। इससे उन्हें अपने साहबों को गरियाने का विशेषाधि ाकार......''

''आप औपचारिकता को ध्यान में न लाएं और निःसंकोच इसका सेवन करें'' चित्रगुप्त के स्वर में सामने पड़ी संचिका के निष्पादन की व्यग्रता स्पस्ट दिखाई दी।

''आप निश्चिंत रहें'' मानव ने बोतल से पात्र में सोमरस भरते हुए चित्रगुप्त से कहा,''मैं आधुनिक युग का मसिजीवी हूँ। हम लोग फोकट की मिलने पर संकोच को अपने पास तक नही फटकने देते। आपसे क्या छुपाना, और फिर यह सत्य तो आज सभी जानते हैं कि हम लोग फोकट की पिलाने वालों के ही लिए लिखते हैं। पत्रकारिता के क्षेत्र का आज यह मुख्य आकर्षण है।''

चित्रगुप्त ने वार्तालाप को विराम देने के विचार से कोई टिप्पणी नहीं दी। चित्रगुप्त की उदासीनता को परखकर मानव ने पात्र को होंठों से

लगाया तो अवसर पाकर चित्रगुप्त ने बात छेड़ी,'' बंधुवर! आपके जन्म से लेकर कुछ काल पूर्व तक की समस्त सूचना हमारे पास उपलब्ध है, परन्तु आपके ताजाकर्मों की सूचना अपेक्षित है। विशेषकर, आपके अकस्मात् इस तरह अनाहूत उपस्थित होने के संदर्भ में हमारे मन में विशेष जिज्ञासा हो रही है। कृपया आप हमें इस विषय पर सब कुछ सविस्तार बताएं जिससे हम अविलंब यहॉं देवलोक में आपके ठहरने की समुचित व्यवस्था करने में समर्थ हो सकें।''

तभी चित्रगुप्त ने मानव को बुरा–सा मुँह बनाते देखा तो व्यग्रता के साथ पूछा,'' बंधुवर! क्या हमारा सोमरस आपकी इम्पोर्टेड व्हिस्की की तुलना में बेस्वाद है......?''

''नही–नही, ऐसी बात नही है। वास्तविकता यह है कि फोकट की पीते समय मात्र पीने पर ध्यान रखना ही लाभकर होता है और आप उस सबके बारे में पूछ रहे हैं, जिसे इस समय तो कम–से–कम मैं कतई याद नही करना चाहता हूँ'' मानव ने बुरा सा मुँह बनाकर चित्रगुप्त को दो टूक जवाब देकर अपने पात्र को पुनः मुँह से लगा लिया।

मानव के इस उत्तर से चित्रगुप्त को पसीना छूटने लगा। मानव की संचिका पूरी न कर पाने पर भगवानश्री के रोष की कल्पना से उसका हृदय विचलित होने लगा। तभी उसका ध्यान मानव की ओर गया जो पात्र को खाली कर उसे पुनः निःसंकोच भर रहा था। सोमरस के प्रति मृत्युलोक के प्राणियों में बढ़ रहे आकर्षण पर कुछ समय पूर्व भगवानश्री द्वारा व्यक्त चिन्ता का भी उसे स्मरण हो आया। उसने मानव को आवश्यक सहयोग के लिए तैयार करने के उद्देश्य से उसे ललचाया,''संकोच को त्याग कर पिएं, सोमरस पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है।''

चित्रगुप्त की बात सुनकर मानव का चेहरा अनायास खिल उठा। उसने एक सॉंस में पात्र को खाली कर उसे पुनः भरते हुए निःसंकोच कहा, '' एक–दो बोतल जाते समय साथ कर दीजिए तो..........''

चित्रगुप्त को मानव की यह मॉंग उत्कोच के समान लगी, परन्तु संचिका को पूरा करने की अपनी विवशता को ध्यान में रखकर उसने अपने स्वर में मिठास घोलते हुए कहा,''अवश्य बंधुवर! अभी यदि आपकी तृषा

शांत हो गई हो तो अपने बारे में कुछ बताने का कष्ट करें.....आशा है कि अब आपका मन, जिसके लिए आप कुछ मूड–ऊड जैसा कह रहे थे, जम गया होगा......''

''अब तो मूड जमा ही रहेगा, सोमरस जो है'' मानव ने चहक कर कहा,'' मैं भारत सरकार के एक सार्वजनिक संस्थान का अधिकार–विहीन अधिकारी हूँ, जहाँ राजभाषा अधिनियम की बाध्यता के कारण राजभाषा में एक पत्रिका निकालने की विवशता महसूस की जा रही है। इस हेतु उसे एक ऐसे सम्पादक की आवश्यकता है जो पत्रिका निकालने की खानापूरी करता रहे। पता नहीं कि पत्र–पत्रिकाओं में छपी हमारी कुछ रचनाओं के कारण हमें आला दर्जे का साहित्यकार मानकर अथवा पत्रिका के लिए सस्ते रचनाकारों की अनुपलब्धता की स्थिति में हर अंक के समस्त पृष्ठों को भर सकने की हमारी संभावित क्षमता का अंदाज कर हमें इस पत्रिका के सम्पादन का कार्यभार दे दिया गया। नया मुल्ला ज़्यादा प्याज खाता है, और उसपर राजभाषा के प्रति मन में अगाध प्रेम...! तो महोदय! ऐसे में कार्यालय में निश्चित समय के बाद भी कार्यरत रहना स्वाभाविक है। कल भी मैं होली के अवसर पर पत्रिका का एक विशिष्ट और संग्रहणीय अंक निकालने की संभावनाओं पर विचार कर रहा था। शाम हो चुकी थी, सभी सहयोगी जा चुके थे, परन्तु मुझे इसका आभास तब हुआ, जब सहसा पावर कट हुआ और कमरे में गहरा अंधकार छा गया। मैंने अपनी दिन भर की थकी आँखों को बंद किया और धैर्य के साथ जनरेटर से करेंट दिए जाने की प्रतीक्षा करने लगा। कुछ क्षणों के बाद जब कक्ष में फिर से लाइट आई, तो मैंने पाया कि मैं अपने कमरे में अकेला नही हूँ। मेरे चारों ओर कुछ युवक–युवतियाँ भीड़ लगाकर खड़े हैं। उनकी मुखमुद्रा आक्रामक थी। मैंने उनसे घबराकर पूछा,'' आप लोग......मेरे कक्ष में.........किसलिए........?''

''हम लोग नवोदित लेखक वर्ग का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं'' एक युवक ने आगे निकलकर कहा,'' हमें आपके बारे में अनेक आरोप सुनने में आए हैं। हम लोग आज आप पर मुकदमा चलाने आए हैं। आरोप सही पाए जाने पर हम लोग आम सहमति से आपको सजा सुनाएंगे।''

दो मोटे–ताजे युवकों ने मुझे जबरन उठाकर कमरे के एक कोने में अभियुक्त की तरह खड़ा कर दिया। भीड़ में से एक युवक ने मेरी कुर्सी पर बैठकर जज की भूमिका निभाते हुए उपस्थित भीड़ से कहा,'' पहला मुकदमा पेश हो।''

भीड़ के बीच से निकलकर एक नवयुवती आगे आई और बोली, ''मी लॉर्ड! यह दुष्ट सम्पादक मेरा अपराधी है......इसने न केवल मेरी बल्कि मेरी रचनाओं की भी खूब हँसी उड़ाई है।''

''कोई सबूत है क्या आपके पास?'' जज की भूमिका निभा रहे युवक ने उस नवयुवती को प्रभावित करने के लिए अपने चेहरे पर आवश्यक गंभीरता ओढ़ते हुए पूछा।

''हॉं, मी लॉर्ड!'' नवयुवती ने अपने बैग से एक कागज का टुकड़ा निकालकर कहा,'' यह देखिए, इस दुष्ट सम्पादक ने किस तरह मेरी और मेरी रचना की हॅंसी उड़ाई है।''

''उपस्थित लोगों की सुविधा के लिए आप इसका पत्र पढ़कर सुनाएं। इसके अपराध की पृष्ठभूमि को समझने के लिए आप अपने पत्र की जानकारी भी दें'' जज की भूमिका कर रहे युवक ने अपने स्वर में शहद घोलते हुए कहा। नवयुवती ने सस्वर पहले अपना पत्र पढ़ा—

''कर जोड़े विनती करूँ, सम्पादक श्रीमान!
मेरे होली—लेख पर किंचित देकर ध्यान,
किंचित देकर ध्यान, अपेक्षित मदद करेंगे,
कॉमा, फुलस्टाप जहॉं न हों, दे देंगे,
नई लेखिका हूँ, स्थापित मुझे कीजिए,
मुझे पत्रिका में थोड़ी सी जगह दीजिए।

मी लॉर्ड! मेरे इस निवेदन के उत्तर में इस दुष्ट सम्पादक ने जो लिखा है, अब उसे सुनिए—

प्रिय लेखिका महोदया! धन्य हमारे भाग्य,
हम विभोर हैं देखकर, साहित्यिक अनुराग,
साहित्यिक अनुराग, मदद को ही बैठे हैं,
जरा दीजिए ध्यान, बात जो हम कहते हैं,
कॉमा, फुलस्टाप भेजिए बस कागज पर,
फिट कर पाएँ लेख एक हम जिसके ऊपर।''

पत्र पढ़ते हुए नवयुवती ने अपने ऑंचल से बार—बार अपनी ऑंखों को पोंछ—पोंछ कर उपस्थित भीड़ के साथ—साथ मुझे भी खासा प्रभावित कर दिया। जज बने युवक ने भी नवयुवती से प्रभावित होकर उसकी प्रेषित रचना की स्तरीयता को परखना सर्वथा अनावश्यक समझा और किसी

सफाई का मौका दिए बिना ही मुझे अपराधी घोषित कर दिया। उसके निर्णय का सभी ने तालियाँ बजाकर स्वागत किया।

''सजा का निर्णय सब मुकदमों की सुनवाई के बाद किया जाएगा। अगला मुकदमा पेश किया जाए। आप लोग शांत होकर सुनें।'' जज महोदय ने तालियाँ पीट रही उस भीड़ को नियंत्रित करने के लिए ऊँची आवाज में टोका।

एक नवयुवक भीड़ से निकलकर जज के सामने आया और बोला,''मी लॉर्ड! यह सम्पादक कविता के मूल स्वरूप को मिटाने के पीछे पड़ा है। यह बेहतर पारिश्रमिक का लोभ दिखाकर कवियों को क्षणिकाएं लिखने के लिए प्रेरित करता है।''

''कोई सबूत?'' जज बने युवक ने जिज्ञासा की।

''जी हाँ, मी लॉर्ड! इसने मुझे मेरी कविता को अस्वीकृत कर लौटाते हुए जो कुछ लिखा है, आप उसपर गौर करें–

प्रिय कवि जी! बात मेरी ध्यान से लगाएं,
लिखते हैं व्यर्थ आप लंबी कविताएं,
पत्रिका के नियमों पर आपका न ध्यान है,
फी कविता मानधन देने का प्रावधान है,
कविता प्रत्येक जब समान ही धन पाए,
लेखिनी को ज़्यादा कवि किसलिए घिसाए?''

इतना सुनते ही भीड़ से मारो–मारो की आवाज उठने लगी। संभवतः उस भीड़ में कविता की इस गंभीर विधा के विरोधी अधिक थे। उस कोलाहल में मेरे लिए यह समझा पाना कतई संभव नहीं था कि मेरे मित्रों! जरा मेरी मजबूरी को समझो......40 पृष्ठों की पत्रिका में आप कवियों के महाकाव्यों को न छाप पाने की विवशता को समझो....परन्तु उस भीड़ के आक्रामक तेवर देखकर भय से मेरे मुख से विरोध का एक भी शब्द तो दूर, एक चूँ भी नहीं निकली।

'यह आरोप भी सिद्ध हुआ'' मुझे खामोश देखकर जज ने सफाई में कुछ कहने की औपचारिकता का भी निर्वाह अनावश्यक समझकर अपना

स्पष्ट निर्णय सुनाते हुए भीड़ को संबोधित किया,'' अगला मुकदमा किस रचनाकार का है....?''

भीड़ को चीरकर एक सींकिया–सा कविनुमा चेहरा सामने आया,''मी लॉर्ड! इस सम्पादक ने मेरी समाजवादी कविता की ऐसी तौहीन की है कि आज भी उसको याद करते ही मेरा खून खौलने लगता है। एक दिन जब मैंने इसी कक्ष में इससे मिलने के लिए प्रवेश किया और इसने मुझे देख कर कहा 'कहिए', तो बस मी लॉर्ड! मैं इसे अपनी वह कविता सुनाने लगा जो मैं इसे देने आया था, परन्तु इसने बीच में ही टोक–कर.....''

'कृपया आरोप को स्थापित करने के लिए अपनी कविता की वे लाइनें सुनाइए जिन्हें सुनकर इसने आपको बीच में ही टोका था,'' तभी भीड़ में से किसी ने उस कवि को टोका।

इस पर जब जज बने युवक ने भी अपनी सहमति दे दी तो कवि महोदय ने अपनी कविता की ये पंक्तियाँ सस्वर सुनाईं–

''यह क्या हो रहा है मेरे साथ?
जब भी लेता हूँ मैं साँस,
सीने में चुभती है फाँस,
एक अजीब–सा दर्द है,
जो मरोड़ता है पेट,
उबकाई आती है.........''

ये पंक्तियाँ सुनाते–सुनाते वह कवि भावानुसार वही भंगिमाएं बना रहा था जो उस दिन वह मेरे कक्ष में बना रहा था और जिन्हें देखकर मुझे लगा था कि वह किसी भी क्षण वमन कर देगा। परन्तु, इसके पहले कि मैं अपनी गलती को स्वीकार करता और उससे, जज से और भीड़ से क्षमायाचना करता, उसने जज और उपस्थित भीड़ से कहा,''बस, मी लॉर्ड! इसने मेरी कविता यहाँ तक सुनकर मुझे रोक दिया और नकली गंभीरता दिखाते हुए कहा–

ऐ मेरे मित्र!
ऐ मेरे भाई!गलत जगह आकर
निज व्यथा है सुनाई;

पूर्व सम्पादक जी–
जो दिया करते थे
होम्योपैथी दवाई,
रचनाओं की ओवरडोज़ से
होकर त्रस्त
कर गए हैं प्रस्थान,
अन्यत्र खोली है
उन्होंने दुकान;
कर रहे हैं कमाई,
सिर्फ एक शर्त है लगाई,
उनकी कविता सुनने वाला ही
पाएगा मुफ्त दवाई;
जो करेगा
इस बात पर एतराज,
उसे देना होगा
दवा का डबल चार्ज;
मैं डॉक्टर ऑफ फिलासफी हूँ,
सर्वथा लाचार
तेरा क्या करूँ उपकार?
पूर्व सम्पादक की दुकान का
या तो ले लो मुझसे पता
या फिर मेरे भाई!
किसी और डॉक्टर को
जाकर दिखा।

जैसे ही वह कवि शांत हुआ, मेरा मन किया कि मैं चिल्ला कर उससे क्षमा मॉगकर सबके समक्ष यह स्पष्ट स्वीकार कर लूँ कि मैं उसकी समाजवादी कविता के मर्म को समझ नही पाया था......और मैंने उसे एक रोगी समझकर ही नेक दिल से सलाह दी थी.....परन्तु तब तक उस समाजवादी कवि ने भीड़ को इसकदर प्रभावित कर दिया था कि सब 'शेम–शेम' कहते मेरी ओर झपट पड़े। जज की भूमिका निभा रहे युवक ने बड़ी मुश्किल से उस भीड़ को नियंत्रित किया और उसे यह कह कर समझाने का प्रयास किया,''कृपया शांत रहें और अदालत की कार्रवाई चलने दें। इसे दण्ड देने का अवसर आपको अवश्य ही मिलेगा। कृपया धैर्य रखें।

निःसन्देह अभी आप लोगों में से कई और लोगों के पास भी इसके विरुद्ध शिकायतें होंगी। उनको भी अपनी बात विस्तार से यहाँ कहने का मौका मिलना चाहिए....''

तभी भीड़ के पीछे से एक वृद्ध पुरुष की आवाज सुनाई दी,''मेरे बच्चों! मैं बहुत दूर से आया हूँ, वृद्ध हूँ, कृपया अगला मौका मुझे दें।''

''कौन है?''जज बने युवक ने आवाज दी,'' कृपया सामने आकर अपनी बात कहें जिससे आपकी शिकायत पर गौर किया जा सके।''

भीड़ को चीरकर वह वृद्ध पुरुष जज के सामने उपस्थित हुआ। मुझे उसकी सूरत कुछ जानी–पहचानी लगी। ध्यान से देखा तो पाया कि वह वृद्ध मेरे ससुर जी थे। मैं उन्हें वहाँ देखकर जहाँ चौंका, वही मन–ही–मन मुझे घबराहट भी होने लगी कि अब इन्हें मुझसे क्या शिकायत हो गई?! मैंने उन्हें प्रणाम किया, जिसे उन्होंने सर्वथा अनदेखा कर दिया और जज से बोले,'' बेटा! यह सम्पादक मेरा जमाता है। सम्पादक बनने के बाद इसके असली रंग–ढंग सामने आ रहे हैं। इसे मैंने पत्र लिखकर सूचित किया कि मैं इसकी पत्नी को भेज रहा हूँ तो इसने मुझे जो जवाब दिया उससे इसकी कलई खुल गई है। यह मेरे साथ–साथ मेरी बेटी का भी गुनहगार है। आप लोग ही अब इसका फैसला कीजिए...।''

जज से पहले ही भीड में से कुछ लोगों ने उनसे मेरे अपराध का खुलासा करने का आग्रह किया। जज बने युवक ने भी उनसे सहमत होत हुए मेरे ससुर जी से निवेदन किया,'' आप विस्तार से इसकी हरकत पर प्रकाश डालें ताकि आपके साथ पूरा न्याय किया जा सके।''

सबके आग्रह पर मेरे ससुर जी ने अपने कुर्ते की एक जेब से पहले अपना चश्मा निकालकर अपनी आँखों पर चढ़ाया और फिर दूसरी जेब से एक कागज निकालकर पढ़ने लगे–

यूँ भी पढ़–पढ़ कर इसे, माथा होता गर्म,
गद्य लिखा या पद्य है– समझ परे यह मर्म,
समझ परे यह मर्म, बात यह गाँठ सहेजें,
सीधी–सादी हमें नई एक रचना भेजें,
रचना यदि मन को भाई तो अपना लेंगे,
वरना उसे सखेद आपको लौटा देंगे।

ससुर जी जैसे–जैसे पत्र पढ़ रहे थे, वैसे–वैसे मेरे चेहरे की रंगत उड़ती जा रही थी। हाय!यह फगुनाहट के असर में क्या लिख दिया?!

पत्र समाप्त होने पर मैंने क्षमा–याचना के लिए मुँह खोलना ही चाहा था, तब तक सजा देने के लिए आई रचनाकारों की वह भीड़ अपना धैर्य खोकर मारो–मारो कहती मेरी ओर झपट पड़ी। मैं भीड़ के उग्र तेवर देखकर भय से बेहोश हो गया। उसके बाद क्या हुआ, मैं नहीं जानता। जब ऑख खुली तो अपने आप को देवलोक में आपके सामने पाया।'' मानव का स्वर अपनी कथा के अंत तक आते–आते कड़ुवाहट से भरने लगा था, अतः कथा को समाप्त करते ही वह निःसंकोच पुनः अपने खाली पात्र में सोमरस ढालने लगा।

चित्रगुप्त एक निपुण आशुलिपिक की तरह उस मानव की कथा का एक–एक शब्द संचिका में दर्ज करता जा रहा था। उसे जहॉ संचिका के पूर्ण होने का संतोष हो रहा था वहीं उसका हृदय उस मानव के प्रति करुणा से भरता जा रहा था। संचिका को पूरा करने के पश्चात वह पाप–पुण्य का लेखा–जोखा निकालने का उपक्रम करने ही वाला था, तभी भगवानश्री ने कक्ष में प्रवेश किया और चित्रगुप्त से कहा,'' हे चित्रगुप्त! इस अकस्मात पहुँचे मानव के प्रति उमड़ी उत्सुकता के वशीभूत मैं अपने को रोक नहीं सका और कक्ष के बाहर से कान लगाकर इसकी पूरी कथा को सुनता रहा। मृत्युलोक के प्राणियों से इस कलियुग में किसी सद्कार्य की तो हम लोग अब आशा करते ही नहीं हैं कि इसके खाते में स्वर्ग हो और अपने हीन कर्म की कुछ सजा तो यह भुगत कर आ ही रहा है; ऐसा करो कि शेष सजा को भुगतने के लिए इसे बच गए जीवन भरके लिए पुनः सम्पादक की कुर्सी पर पदस्थापित कर दो.....''

भगवानश्री की बातों को सुनते ही मानव सोमरस का पात्र छोड़कर उनके श्रीचरणों से लिपट कर चिल्लाने लगा,'' दया.....प्रभु!.....दया......., चाहें तो मुझै रौरव नरक में भेज दें, परन्तु वापस सम्पादक की उस कुर्सी पर न भेजें.....,प्रभु....आप तो कृपानिधान हैं......मुझे ऐसी कठिन सजा मत दें........''

मानव की प्रार्थना पर भगवानश्री का हृदय द्रवित होने लगा, परन्तु देवलोक के विधान का ध्यान करके उन्होंने चित्रगुप्त को इशारा किया कि

वह निर्देश का पालन करे। मानव की कथा से द्रवित चित्रगुप्त ने भगवानश्री से उस मानव के प्रति किंचित कृपालु होने का अनुरोध करने का विचार किया, परन्तु तभी उसकी दृष्टि सोमरस की खाली बोतल पर पड़ी और उसने अपने मन में गहराती करुणा को झटक कर तुरन्त उस मानव को देवलोक से मृत्युलोक में ढकेल दिया।

भगवानश्री के आदेशानुसार वह मानव पुनः सम्पादक की कुर्सी पर पदस्थापित होकर अपनी सजा भुगत रहा है।

...

सुहागरात में बिल्ली मारने की परम्परा भारतीय है अथवा सार्वभौमिक, वैज्ञानिक है अथवा अवैज्ञानिक, बिल्लियों के प्रति उपकार है अथवा अपकार – यह शोध का विषय है और मैं इस विषय पर अधिकार–पूर्वक कुछ कह सकने की स्थिति में नहीं हूँ। मैं यह भी नही जानता कि बिल्लियों के स्थान पर किसी अन्य पशु–पक्षी के नाम पर भी कभी विचार हुआ है या नहीं और न मैं इस बात पर प्रकाश डाल सकता हूँ कि बिल्लियों के इस एकाधिकार को लेकर अन्य पशु–पक्षियों में कोई असंतोष है कि नही। पर इतना मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि सुहागरात में बिल्ली न मार पाने की स्वीकारोक्ति न तो आज तक किसी भारतीय पुरुष ने की है और न ही भविष्य में कोई करेगा। यह दीगर बात है कि बिल्ली मारने की घटना जिन पुरुषों के जीवन में इतिहास का दर्जा पा चुकी है, वे मारी गई बिल्लियों के श्राप के प्रभाव से अथवा नारी मुक्ति के इस दौर में नारियों को बिल्लयाँ न मारने देने के अपराध की सजा के रूप में चूहों जैसा जीवन व्यतीत करने को अभिशप्त दिखाई देते हैं। ऐसे पर्याप्त अनुभवी व्यक्ति गृहस्थी के जंगल में चूहा बनकर बिल में चुपचाप पड़ा रहना ही सर्वथा निरापद मानते हैं।

न जाने क्यों, चूहा बने विवाहित पुरुषों को देखकर मुझे बचपन में सुनी–पढ़ी एक कहानी की याद हो आती है। एक सिद्ध मुनि ने एक चूहे को दया कर पहले बिल्ली, फिर कुत्ता और अंततः शेर बना दिया। अब शेर बने चूहे का बचपना देखिए कि उसने मुनि को ही अपना आहार बनाने का मन बना लिया। मुनि पर झपटा तो मुनि ने 'पुनः मूषकः भव' कह कर चूहे को चूहा बना दिया। तुलनात्मक दृष्टि से प्रत्येक पत्नी मुनि से अधिक व्यवहार कुशल और प्रत्येक पति चूहे से अधिक दयनीय दिखाई देता है।

मुनि की तुलना में प्रत्येक पत्नी सुविधानुसार पति को कभी चूहा कभी दुधारू गाय और कभी शेर बनाती रहती है। सेल से खरीद कर लाई साड़ी में कोई खोट दिख गया अथवा किसी पड़ोसिन ने उसे आउट आफ फैशन करार दे दिया, तो पति को शेर बना कर दुकानदार पर चढ़ाई करवा देती है। घर–गृहस्थी के काम में सहायक की आवश्यकता हुई, तो बैल बना लेती है। पड़ोसिन से प्रतिस्पर्धा के लिए दुधारू गाय और अपने क्रियाकलापों में हस्तक्षेप करने पर पुनः चूहा बना लेती है।

मुनि के चूहे की तुलना में पति की स्थिति दयनीय इसलिए दिखाई देती है, क्योंकि सारी उम्र रूप बदलते रहने की मजबूरी उसकी नियति है। ऐसी नियति के बावजूद कुछ पति कभी–कभी शेर से वापस चूहे का रूप बदलने से इनकार करने की मूर्खता कर बैठते हैं। बेमौसम बरसात की तरह ऐसी अनहोनी यदा–कदा ही घटती है और प्रायः शेर बनने का मौका मिलने से चढ़े सुरूर के कारण ही होती है। ऐसी स्थिति में पत्नी जिह्वा से धाराप्रवाह मंत्रोच्चार करते हुए और आवश्यकतानुसार पति के विद्रोह की आग को अपने आँसुओं से बुझाते हुए 'पुनः मूषकः भव' का यत्न करती है। साधारण परिस्थितियों में यह कर्मकाण्ड ही पूर्णतया प्रभावी देखा गया है। यदि पति हठपूर्वक 'पुनः मूषकः भव' को मानने से इनकार कर देता है तो पत्नी ऐसी असाधारण परिस्थिति में और भी प्रभावी मंत्रोच्चार करती है–''सम्हालो अपनी गृहस्थी, मैं चली अपने मायके।'' बहुधा यह मंत्रोच्चार ही कारगर हो जाता है। परन्तु कभी–कभी पति का पागलपन अति विशिष्ट परिस्थितियाँ पैदा कर देता है और तब अंततः पत्नी धीमे पर अमोघ प्रभाव वाले मंत्रोच्चार और कर्मकाण्ड का सहारा ले मायके प्रस्थान कर जाती है।

कुछ ही दिनों में पति का पागलपन दूर हो जाता है और वह अपनी पूर्व हैसियत पर पहुँच जाता है।

सुहागरात में बिल्ली मारने का अपराध इस खाकसार से भी हो चुका है। औरों ने कैसे मारी यह तो वे ही जानें, पर हमने तो कमरे में सहेज कर रखे गए दूध के गिलास पर बिल्ली को दांव लगाते देख अपनी चप्पल फेंक कर उसे मारा था। सच कहूँ तो अपने कक्ष में साक्षात बिल्ली को देखकर बिल्ली मारने की प्रक्रिया को मैं प्रतीकात्मक न मान कर वास्तविक ही मानता आ रहा हूँ–विवाह के अन्य रीत–चार की तरह। वैसे बिल्ली मार चुकने का दावा करने वाले मित्र आज तक मुझसे सहमत नहीं हैं। तो हॉ, छुटपन में बड़ों से पिट–पिट कर भी कंचों के साथ किए गए अभ्यास का फल था अथवा बिल्ली की या हमारी नियति– हमारा निशाना ठीक बैठा और बिल्ली तड़प कर खुली खिड़की से बाहर कूद गई। रस्म पूरी हुई मानकर और बिल्ली के व्यवधान के स्थायी हल के लिए हमने खिड़की बन्द कर पलट कर अपनी हो चुकी श्रीमती जी को देखा तो उन्हें मुस्कराते हुए पाया। उस दिन तो वह मुस्कान मुझे प्रशंसात्मक दिखाई दी थी, पर शायद वह चूहे द्वारा बिल्ली के पिटने की अनहोनी पर उपहासात्मक थी। ऐसी ही अनहोनी उस दिन हो गई जब पहली बार हमने स्थायी रूप से शेर बनने का मन बनाकर 'पुनः मूषकः भव' के मंत्रोच्चार को अनसुना कर दिया। हमारी श्रीमती जी का 'सम्हालो अपनी गृहस्थी, मैं चली अपने मायके' वाला मंत्रोच्चार भी हम पर कोई प्रभाव नहीं डाल सका। हमें 'विनाश काले विपरीत बुद्धि' की उक्ति को चिरतार्थ करते देख श्रीमती जी ने अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए अपना अमोघ अस्त्र चलाया और मायके पलायन कर गईं। जाते–जाते कह गईं, ''जब आटे–दाल का भाव पता चलेगा, तब अक्ल ठिकाने आएगी।'' दुर्भाग्य कि हर महीने का राशन खरीद कर लाने के कारण आटे–दाल के ताजे भाव जानने के मद में हम उनकी उक्ति का गूढ़ार्थ नही समझ सके।

शेर बनने की जिद में हमने कुछ दिन फास्ट फूड और होटल का सहारा लिया। पर शीघ्र ही हम समझ गए कि भोजन की स्थाई व्यवस्था के बिना ज्यादा दिनों तक हमारा शेर बना रह पाना मुमकिन नहीं। मैंने अनुमान लगाया कि यदि एक–डेढ़ महीने की व्यवस्था हो जाए तो श्रीमती जी का हौसला

पस्त हो जाएगा और वह हार मानकर घर लौट आएंगी। दो–दो सरकारी पत्रिकाओं के सम्पादन से भी ज्यादा दुरूह इस समस्या को हल करने की एक युक्ति अंततः हमने निकाल ही ली।

अगले दिन स्वीकृत, अस्वीकृत और विचाराधीन रचनाओं के ढेर से व्यंजन संबंधी लेखों को छांटकर उनमें से ऐसी स्थानीय लेखिकाओं के पते नोट किए जिन्होंने पहली बार पत्रिका को लेख भेजे थे। नियमित लेखिकाओं की तुलना में नवीन लेखिकाओं में 'छपास' के प्रति अधिक प्यास को ध्यान में रखकर ही हमने उनका चयन किया था। इसके पश्चात हमने उन्हें यह पत्र प्रेषित किया–

प्रिय महोदया,

कृपया अपने लेख का स्मरण करें। हमें खेद है कि आपकी व्यंजन विधि स्वाद परीक्षण के क्रम में खरी नहीं उतरी और तो और फेंके जाने पर उसे खाकर हमारी गली के आधा दर्जन कुत्ते भगवान को प्यारे हो गए। रात–बेरात आते–जाते लोगों पर निःशुल्क भौंकने वाले इन कुत्तों की सेवाओं से वंचित हमारे पड़ोसी हम पर हरजाना देने का दबाव डाल रहे हैं। हरजाना न देने पर और मोहल्ले में किसी के घर चोरी होने पर कुत्तों को सुनियोजित ढंग से हटाने का आरोप लगा कर हमें अंतर्राष्ट्रीय चोरों के गिरोह का सरगना सिद्ध करने की धमकी दी गई है। चूँकि आपका हस्ताक्षर युक्त लेख हमारे कब्जे में है, अतः सफाई के तौर पर पेश किए जाने पर संभवतः आपको भी इस गिरोह की सक्रिय सदस्या घोषित कर दिया जाए।

अतः यह आपके हित में होगा कि आप व्यंजन पाक–प्रक्रिया का प्रदर्शन हमारे सामने कर हमसे स्वाद परीक्षण करा कर अपने बचाव के लिए हमसे आवश्यक प्रमाण–पत्र ले लें। प्रमाण–पत्र प्राप्त आपके लेख के प्रकाशन को सहज प्राथमिकता भी दी जाएगी।

–– भवदीय

आशा के अनुरूप शीघ्र ही बदहवास लेखिकाओं ने फोन पर अथवा व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा व्यंजन पाक–प्रक्रिया प्रदर्शन के लिए

सम्पर्क करना शुरू कर दिया। मैंने अपनी सुविधा के अनुसार प्रति दिन एक लेखिका के घर स्वाद परीक्षण का कार्यक्रम तय किया। हमने हिसाब लगाया कि हमारी भोजन की समस्या का दस दिनों का समाधान हमारे हाथ लग गया था। हमने जान–बूझ कर समय लंच अथवा डिनर के आस–पास रखा था ताकि शिष्टाचार के अंतर्गत भोजन का सहज आमंत्रण भी मिल सके।

नियत दिन और नियत समय पर सम्पादकीय गरिमा के अनुरूप गंभीरता का लबादा ओढ़े मैंने पहली लेखिका के दरवाजे पर दस्तक दी। परिचय की आवश्यकता नही पड़ी, क्योंकि पत्र पाकर बदहवास मिलने आने वाली लेखिकाओं में से वह सर्वप्रथम थी। उनके चेहरे पर उस समय भी घबराहट की परछांइयाँ दिखाई दे रही थी। उन्होंने मुझे ड्राइंगरूम में व्यवस्थित कर चाय और जलपान की औपचारिकता पूरी की। सहसा उन्होंने एक अप्रत्याशित प्रश्न दागा,''सर! आपने मेरी रेसिपी खुद ट्राई की थी?''

मैं कुछ असहज हुआ, परन्तु तुरन्त ही सहज होकर मैंने प्रत्युत्तर में प्रश्न कर दिया,''क्यों, आपको कोई सन्देह है?''

लेखिका कुछ सहम सी गई, और सफाई देने लगी,''जी.....जी नही, संदेह कैसा! आजकल तो सभी छोटे–बड़े होटलों में पुरुष लोग ही खाना बना रहे हैं'', और थोड़ा मुस्कराकर उन्होंने सहज होते हुए कहा,'' सच तो यह है, सर! कि होटलों में पुरुषों द्वारा बनाए गए व्यंजनों को खाते हुए ही तो हम लोगों को इन व्यंजनों का आइडिया मिलता है। वह तो बस मैं समझती थी कि सम्पादक लोग व्यंजनों के नए–नए अंग्रेजी नामों से प्रभावित होकर ही लेखों का चयन करते हैं'', यह कहते हुए उन्होंने बेवजह हँसने का प्रयास किया।

मैंने उन्हें सत्य के आस–पास मंडराते देख कर बात का रुख पलटा और उनके 'प्रदर्शन' का जिक्र किया।

''मैंने सारी तैयारी कर ली है, सर! बस, आपके आने का इन्तजार कर रही थी मैं! आप किचेन में चलना पसन्द करेंगे कि मैं स्टोव वगैरह यहीं पर........?''

यद्यपि श्रीमती जी के बारम्बार टोकने पर भी हम किचेन में जाना

अपनी हेठी समझते थे, मगर लेखिका महोदया को और परेशान करना हमने उचित नही समझा और हमने उनके साथ उनके किचेन में प्रवेश किया। तभी लेखिका ने पूछा,'' सर! मैं बनाऊँ या आप ट्राई करेंगे....मैं बताती जाऊँगी......?''

''नही......नही, आप ही बनाएं; दूसरे के किचेन में मुझे असुविधा होती है।'' मैंने लेखिका के इस बाउंसर पर 'डक' कर जाना ही बेहतर समझा।

वह व्यंजन बनाती रही और मैं जाहिरा तौर पर उनसे इधर–उधर के प्रश्न पूछ कर पॉकेट नोटबुक में नोट्स लेने के उपक्रम का प्रदर्शन करता रहा। हमें तो वास्तव में इन्तजार था किसी गृहणी के हाथ के सुन्दर, सुस्वादु व्यंजन का।

कहना जरूरी नही कि तैयार व्यंजन को टेस्ट करने के नाम पर हमने उसे छक कर उड़ाया। हमारी पाक–प्रक्रिया में संभावित चूक और

कुत्तों के मरने की घटना को दैवी प्रकोप बताकर उनके व्यंजन को प्रकाशन के सर्वथा अनुकूल घोषित कर मैं कैमरा भूल आने पर खेद प्रकट करने लगा। उत्साहित लेखिका ने सहज ही व्यंजन के फोटोग्राफ के लिए किसी और दिन आने का आमंत्रण दिया। मैंने नोटबुक कन्सल्ट कर एक खाली दिन का समय अगली दावत के लिए तय कर लिया। मेरी प्रशंसा से गद्–गद् लेखिका ने डिनर के बाद ही मुझे लौटने की अनुमति दी।

अब श्रीमती जी के बिना हमारी चैन से कटने लगी। कभी इस लेखिका के यहाँ तो कभी उस लेखिका के यहाँ कभी 'स्टफ्ड शकरकंद मोल्ड्स' तो कभी 'कचनार कटलेट', कभी 'क्यूकम्बर सूप' तो कभी 'एग ड्राप सूप', कभी 'परवल मक्खन मसाला' तो कभी 'पनीर दिलरुबा' आदि–आदि खा–खाकर हमारी कमर का घेरा बढ़ने लगा। दूसरी ओर हमारे विरह में श्रीमती जी के दुबलाते जाने की कल्पना कर–कर के हम भाव–विभोर होने लगे।

लेखिकाओं के आमंत्रण का प्रथम राउण्ड समाप्त होने के बाद हमने दूसरे राउण्ड के लिए कैमरा भूल आने की चाल चल ही रखी थी; तीसरे और चौथे राउण्ड के लिए हमने एक काल्पनिक व्यंजन विशेषांक और उसके पश्चात एक अखिल भारतीय व्यंजन प्रतियोगिता की भूमिका तैयार करनी शुरु कर दी थी, पर हाय! हमारा दुर्भाग्य कि पहले राउण्ड का अंत होते–न–होते हम दस्त से परेशान हो गए। पता नहीं कि यह दूर बैठी हमारी श्रीमती जी की आहों का प्रभाव था अथवा लेखिकाओं के नए–नए व्यंजनों के प्रयोगों का। बहरहाल, डॉक्टर ने दवा के साथ–साथ खान–पान में परहेज की हिदायत देते हुए एक हफ्ते तक सुबह–शाम खिचड़ी खाने की सलाह देकर हमें मुसीबत में डाल दिया।

दवा के प्रभाव से जब दस्त सम्हले, तो हमने कुलबुलाती अंतड़ियों को सम्हालने के लिए अपने किचेन में प्रवेश किया। चावल और दाल ढूँढ़ने में किसी वर्ग–पहेली से अधिक श्रम करने के पश्चात अन्दाज मार–मार कर जो खिचड़ी बनी, उसका पहला ग्रास मुँह में जाते ही हम शेर से चूहा हो गए।

उसी दिन पत्नी को तार दिया–''सिंहः पुनः मूषकः अभवत्।''

■ ■ ■

चूहा घोटाला

उर्फ़

चूहे से पाला

मुझे यह मानने में कतई संकोच नहीं कि मैं इस दुनिया में अपनी श्रीमती जी के अतिरिक्त सिर्फ चूहों का खौफ खाता हूँ। यह दीगर बात है कि इन दोनों का खौफ खाने के कारणों के बीच कोई समानता नही है। श्रीमती जी का खौफ खाने का एकमात्र कारण है– भारतीय गृहस्थ जीवन की सनातन परम्परा का निर्वाह। इसके विपरीत चूहों का खौफ खाने का कारण है हमारे साथ घटा चूहा घोटाला और दहेज में मिला

हमारा एकलौता सूट जो सिद्धि विनायक के इन दूतों के कर्तन– कौशल की भेंट चढ़ चुका है। वैसे भी, जिस प्राणी का सिक्का देवलोक में भी चलता हो, उसका हम मानवों पर भय क्यों न व्याप्त हो? मेरी बात पर यकीन न हो तो भारतीय चित्रकारों द्वारा बनाया गया गणेश जी का कोई भी चित्र देख लें। मोदकों को कुतरता चूहा और उदासीन बैठे गणेश जी प्रमाण हैं इस लघुकाय प्राणी के भीमकाय प्रभुत्व का। ऐसे किसी चित्र को देखकर मैं लम्बोदर के स्थान पर इस तीक्ष्ण दंतधारी को नमन करता हूँ, क्योंकि इसमें ही मैं अपना कल्याण मानता हूँ। क्षण में प्रगट और क्षण में विलोप होने की कला में पारंगत, कुतरन–सुख प्रेमी चूहों का ऐसा भय हर उस प्राणी के मन का स्थायी भाव होगा, जो हमारी जैसी स्थिति से दो–चार हुआ होगा।

चूहों से हमारी एकमात्र मुठभेड़ की शुरुआत तब हुई जब चूहों के साथ हमारी श्रीमती जी का सैद्धांतिक मतभेद हो गया। एक तरफ हमारी श्रीमती जी ने जिद पकड़ ली कि भारतीय परिवार की आधुनिक संकल्पना के अनुरूप इस इकाई में एक अदद पति और पेट–जायों के अतिरिक्त अन्य किसी को स्थाई सदस्यता नही दी जाएगी, तो दूसरी ओर चूहों ने हमारे घर की दो–चार दिन की मेहमानी की उनकी पेशकश ठुकरा दी। श्रीमती जी ने चूहों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी और स्वयं जनरल बनकर अपने एकमात्र सैनिक इस खाकसार को फ्रंट–लाइन पर तैनात कर दिया। पति होने के नाते एक अनुशासित सैनिक की भूमिका निभाने को अभिशप्त हम हर रात उनके द्वारा हांके जाने पर उठ–उठ कर चूहों को हांकने लगे। चूहों ने इस युद्ध को हमारा युद्ध मानकर हम पर जवाबी आक्रमण कर दिया और एक रात हमारी टेबल पर चढ़कर हमारी रचनाओं की निःशुल्क आलोचना कर डाली। हमारी रचनाओं की एकमात्र बड़ी आलोचिका हमारी श्रीमती जी ने हँसकर चूहों की साहित्यिक अभिरुचि की सराहना की और एक बार पुनः हमें अलाभकारी साहित्यिक लेखन को छोड़ने की नेक सलाह दी।

हमने आलोचना से बच गईं रचनाओं को सम्हाला और चूहों से निपटने की जमकर तैयारी की। अगली रात कंधे में चाय भरा थर्मस लटकाए और हाथ में डंडा उठाए हम किचेन के हर कोने पर निगाह जमा

कर बैठ गए। चूहों ने कुछ देर तक हमसे आँख मिचौली खेली और फिर युद्धक्षेत्र से पलायन कर गए। चूहों द्वारा हार स्वीकार का लेने की खुशफहमी मन में पाल कर आधी रात के बाद हमने युद्धक्षेत्र से हटकर बिस्तर की शरण ली। बिलों में दुबके बैठे चूहों वाला सपना अभी हमारी ऑखों को सहला ही रहा था कि किचेन से खट–पट की आवाज सुनाई दी। हम उठकर किचेन में पहुँचे तो मैदान चूहों से खाली मिला। हम समझ गए कि चूहों ने हमारे विरुद्ध गुरिल्ला युद्ध छेड़ दिया है। वह सारी रात बिस्तर और किचेन के बीच कवायद करते ही गुजरी और हमें पता भी नहीं चल पाया कि इस बीच कब चूहों ने चुपके से हमारे एकलौते दहेजी सूट की धज्जियाँ उड़ा दी। सुबह उठकर जहाँ श्रीमती जी ने अपने मायके से मिले सूट की मौत पर मातम करना शुरु किया, वहीं हम इस युद्ध में स्थायी विजय के लिए संभावित रणनीति पर गौर फरमाने लगे।

श्रीमती जी द्वारा सूट का मातम मना लेने के पश्चात हमने उन्हें युद्ध–मंत्रणा में शामिल किया और अपना प्रथम प्रस्ताव रखा,''भागवान! क्यों न हम लोग एक बिल्ली पाल लें?''

''और बिल्ली को दूध कहाँ से पिलाएंगे? बिना दूध की चाय पी सको, तो पाल लो।''

''क्यों, दूध की क्या जरुरत है? रोज उसे भरपेट चूहे खाने को तो मिलेंगे ही! हाँ, स्वाद बदलने के लिए कभी–कभी पास–पड़ोस से चुपके से दूध पी आया करेगी।'' हमने पत्नी को फुसलाना चाहा।

''हाँ...हाँ! तुम्हें क्या, तूम तो दिन भर ऑफिस में मजे मारोगे, यहाँ भेद खुलने पर पड़ोसिनें जीना दूभर कर देंगी। नहीं.....नहीं, कोई और उपाय हो तो बोलो''

हमने सोच–समझ कर अपना दूसरा प्रस्ताव रखा,'' क्यों न हम लोग आटे में चूहामार पाउडर मिला कर गोलियाँ बना कर घर में डाल दें?''

''न बाबा......ना....'',श्रीमती जी एकदम से बिगड़ गईं,''विनायक के दूतों को मैं नही मारने दूँगी। भूल गए, कितनी भद्द उड़ी थी, जब मेरे

हाथ से गणेश जी ने दूध नहीं पिया था?!''

''अरे बाबा! गणेश जी ठहरे शुद्ध दूध के प्रेमी और हमारा ग्वाला तो तीन–चौथाई पानी मिलाकर दूध देता है, भला वह कैसे पीते?''– हमने श्रीमती जी को बहलाने का प्रयास किया, मगर श्रीमती जी ने इस प्रस्ताव को भी अस्वीकृत कर दिया।

हमें ऑफिस के लिए देर हो रही थी, अतः हमने हड़बड़ी में यह प्रस्ताव रख दिया,'' क्यों न चूहों से हार मानकर उनसे सन्धि कर ली जाए? शायद एक रोटी रोज पर चूहे मान जाएं.....''

इस प्रस्ताव पर श्रीमती जी आपे से बाहर हो गईं। पहले उन्होंने हमें फटकारा, फिर हमारे पुंसत्व को ललकारा और हमने तंग

आकर ऑफिस में इस समस्या पर एक विभागीय मीटिंग आयोजित कर डाली। हमारे भंडारपालक ने सलाह दी,''सर! आप एक चूहादानी खरीद लीजिए।'' हमने इस नेक सलाह पर खुश होकर उसे उस वर्ष की गोपनीय रिपोर्ट में 'तरक्की के सर्वथा योग्य' घोषित करने का मन में फैसला किया और शाम को बाजार से एक चूहादानी खरीद कर घर पहुँचे।

उस रात चूहादानी को भलीभाँति व्यवस्थित कर हम बिस्तर पर यह सोचकर लेटे कि चलो, अब चैन से सो सकेंगे। पिछली कई रातों की नींद पूरी करने के लिए हमने सुबह देर तक सोने की योजना बनाई थी, पर सुबह–सुबह ही श्रीमती जी ने उस पर पानी फेर दिया, ''ऐ जी उठिए, चूहादानी में एक चूहा फंसा है, उसे घर के बाहर छोड़ कर आइए।''

हमने आँखें बंद किए–किए ही जवाब दिया,'' ठीक है, छोड़ आएंगे, पहले चाय तो पिलाइए।''

''चाय! जब तक वह मुआ वहाँ है, तब–तक मैं किचेन में नही जाने वाली।''

हम समझ गए कि श्रीमती जी ने अंगद की तरह पाँव जमा दिया है और अब वह किसी भी तरह टस–से–मस नहीं होंगी। हमने रजाई से निकल कर गाउन लपेटा और किचेन से चूहादानी उठा कर बाहर चले। हमने सामने सड़क पर चूहादानी का मुँह खोल दिया। हमारी उनींदी आँखों ने यह भी नहीं देखा कि चूहादानी से निकल कर चूहा किधर गया। हमें अपनी गलती का एहसास तब हुआ जब हमें अगले ही क्षण श्रीमती जी की कर्णभेदी चीख सुनाई दी। हमने भागकर देखा तो श्रीमती जी को बरामदे में चित्त पड़ा पाया। हम समझ गए कि चूहे ने चूहादानी से निकल कर पुनः हमारे घर का रुख पकड़ कर बरामदे में खड़ी हमारी वीरांगना श्रीमती जी पर अप्रत्याशित आक्रमण कर उन्हें धराशायी कर दिया है। हमने अपराध भाव के साथ श्रीमती जी को उठाकर बिस्तर पर लिटाया। हमारा वह सारा दिन छुट्टी लेकर श्रीमती जी की सेवा करने में बीता।

अगले दिन से हम हर सुबह आधा–एक किलोमीटर की सैर के लिए अभिशप्त हो गए। श्रीमती जी शहीद हो चुकीं रचनाओं और सूट की याद दिला–दिला कर और स्वास्थ्य के लिए सुबह की सैर के फायदे गिना–गिना कर हमारा मनोबल बढ़ाती रहीं। हफ्ता–दस दिन यह कार्यक्रम निर्विघ्न चलता रहा, परन्तु उसके बाद एक नई समस्या सामने आ गई। एक सुबह मोहल्ले वालों ने दल–बल के साथ हमें उस समय सड़क पर घेर लिया जब हम चूहादानी में चूहा लिए उसे छोड़ने जा रहे थे,''भाई साहब! यह क्या बात हुई कि आप अपने घर की आफत हम लोगों के घर के आस–पास छोड़ रहे हैं। यह तो पड़ोसी का धर्म नही हुआ। आपको चाहिए कि आप चूहा अपने मोहल्ले की सीमा के बाहर छोड़ कर आएं।''

हमने उनसे तर्क करना चाहा कि उन्हीं की तरह अगले मोहल्ले वाले भी आपत्ति करने लगे तो इस क्रम का अंत क्या शहर की सीमाओं के पार तक नहीं चला जाएगा, परन्तु उनके आक्रामक तेवर देखकर हम चूहे को चूहादानी में लिए–दिए घर वापस आ गए। मोहल्ले वालों का निर्णय सुनकर श्रीमती जी भी सोच में पड़ गईं। पहली बार हमारी श्रीमती जी हमसे एकमत हुईं कि अगले मोहल्ले वाले भी आपत्ति कर सकते हैं। चूहादानी बरामदे में रखकर हम ऑफिस की तैयारी करने लगे। तैयार होते–होते हमने फैसला किया कि चूहादानी कार में रख लेंगे और रास्ते में मौका देखकर चूहे को मुक्त कर देंगे। चूहा छोड़ने की जरूरत के कारण समय से कुछ पहले ही हम घर से निकल तो पड़े मगर ऑफिस की राह में कार से उतर कर आते–जाते लोगों के बीच चूहा छोड़ने में हमें संकोच होने लगा और हम संकोच करते–करते अंततः ऑफिस ही पहुँच गए। समय से पूर्व पहुँच जाने के कारण 'पार्किंग' में हमने अपने आप को अकेला पाया तो चुपके से चूहे को वहीं मुक्त कर दिया।

शाम को पत्नी ने चूहे के बारे में पूछा तो हमने सत्य बात बता दी। श्रीमती जी ने एक मुद्दत के बाद हमारी इस कार्यवाही को सराहा,''वेरी गुड, यह ठीक किया। कल से मैं सुबह जल्दी नाश्ता तैयार कर दिया करूँगी, ताकि तुम समय से पहले ऑफिस पहुँच कर चूहा छोड़ सको''

पत्नी को प्रसन्न देख हम भी प्रसन्न हो गए। काश! तब हमें यह मालूम होता कि भविष्य में चूहों से हमारा एक और गम्भीर पाला पड़ने वाला है।

घर के चूहों को पूरी तरह निपटा कर हमें चैन की वंशी बजाते हफ्ता–दस दिन ही बीता होगा कि एक दिन भंडारपालक ने आकर सूचना दी,''सर! भंडार में न जाने कहाँ से बहुत सारे चूहे आ गए हैं, बड़ा उत्पात कर रहे हैं.....''

चूहों की चर्चा सुनकर हमें बिजली का झटका–सा लगा। हमें लगा कि जैसे हम रंगे हाथों पकड़े गए हों। हमने जैसे–तैसे अपने आप को सम्हाला और तेज आवाज में कहा,''कहाँ से आ गए हैं– का क्या मतलब?! आगे–पीछे मैदान है, जंगल–झाड़ी है, आ गए होंगे कही से।''

भंडारपालक हमारा रुख देखकर आश्चर्य में पड़ गया। चूहों के स्रोत की चर्चा छोड़कर उसने पूछा,'' इन चूहों के बारे में कुछ निर्देश मिल जाते तो.......''

''निर्देश! आप भी कमाल करते हैं। अरे! जाइए और बाजार से एक चूहादानी खरीद लाइए।'' हमने भंडारपालक को उसी की सलाह वापस पकड़ा दी।

''जी सर! पर पहले यदि पता कर लेते कि इसे लोकल पर्चेज के अंतर्गत खरीदना होगा अथवा निविदाएं मंगाकर....?''

हमने भंडारपालक को भेज कर बड़े बाबू को बुलाया और उन्हें चूहों के प्रकोप की जानकारी देकर चूहादानी की खरीद से संबंधित नियमों की जानकारी माँगी। बड़े बाबू ने नियमों की खोजबीन कर यह सूचना दी कि पांच सौ रुपयों तक का आइटम लोकल पर्चेज के अंतर्गत खरीदा जा सकता है। हम अभी उनसे चूहादानी खरीदने को कहने ही वाले थे कि तभी उन्होंने बताया,''सर! असली समस्या पर आप ध्यान नहीं दे रहे हैं। चूहादानी में रोज रोटी लगानी होगी, चूहा फंसने पर उसे कार्यालय परिसर

से बाहर छोड़ने की व्यवस्था करनी होगी। इस संदर्भ में समय सीमा और आटे की आवश्यकता के आकलन के लिए एक विशेषज्ञ, रोटी बनाने के लिए 'कुक' और चूहा फेंकने के लिए एक चतुर्थ श्रेणी सहायक की आवश्यकता होगी। यदि आटे की अधिक मात्रा का आकलन किया गया तो उसकी आपूर्ति के लिए निविदांएं मंगानी पड़ सकती हैं। पर आप चिन्ता न करें, सर! मैं इसके लिए आवश्यक नोट बना दूँगा। आप केवल चेयरमैन साहब को सम्हाल लीजिएगा।'' और फिर मेरी ओर झुक कर उन्होंने धीरे से फुसफुसाया,'' सर! हमारे दो साले हैं, बेकार बैठकर हमारी छाती पर मूंग दल रहे हैं। इस मौके पर यदि एक को चूहों के लिए रोटी बनाने पर और दूसरे को चूहा छोड़ने के काम पर बहाल करवा देते, तो बड़ी कृपा होती।''

बड़े बाबू की बात सुनकर हमारा मन हुआ कि हम अपना सर पीटलें। हम बड़बड़ाए कि हे भगवान! कहीं से एक बिल्ली भेज दो इन चूहों के लिए। बड़े बाबू हमारी राय जानने के लिए हमारी ओर ही कान लगाए हुए थे। हमारी बड़बड़ाहट सुन कर बोले,'' हें.....हें.....हें....हें...., बिल्लियॉ यहॉ कहॉ से आएंगी, सर! यहॉ तो हमको–आपको ही दूध–मलाई नहीं मिल पा रही है।'' और फिर धीरे से मुस्कराए,''वैसे मैं समझ गया, सर! आप सालों का जुगाड़ लगवा दीजिए, दूध–मलाई की व्यवस्था कर दी जाएगी...''

और कोई दिन होता तो शायद हम बड़े बाबू को उनके इस प्रस्ताव पर आड़े हाथ लेते। पर चूहों को लेकर हमारी हालत 'चोर की दाढ़ी में तिनका' वाली हो रही थी। बड़े बाबू मुस्कराते हुए चले गए और थोड़ी देर बाद भंडार में चूहों के प्रकोप और उनसे निपटने का एक विस्तृत प्रस्ताव बना कर मेरे सामने रख गए। मैंने बड़े बाबू के प्रस्ताव को एक तरफ रखा और अपने चेयरमैन को जाकर परिस्थिति की मौखिक जानकारी दी। चेयरमैन महोदय ने तुरन्त मुख्य सुरक्षा अधिकारी को तलब किया,'' यह हम क्या सुन रहे हैं? आप लोगों के रहते इस कार्यालय के भंडार में चूहे किस तरह घुसपैठ कर गए?''

मुख्य सुरक्षा अधिकारी को बात समझने में कुछ समय लग गया। परन्तु जब बात उसकी समझ में आई तो उसने अपनी सुरक्षा व्यवस्था

के अंतर्गत आवारा चूहों की घुसपैठ की संभावना को नकारते हुए आशंका व्यक्त की," हो सकता है, चूहों की यह घुसपैठ किसी नियोजित षडयंत्र का परिणाम हो।"

मुख्य सुरक्षा अधिकारी की यह बात सुनकर हमारा कलेजा मुँह को आने लगा। चेयरमैन महोदय ने माथे पर बल डालकर गंभीरता से पूछा," आपका मतलब है कि इस घुसपैठ के पीछे विदेशी ताकतों का हाथ है?"

"अब इस संभावना को पूरी तरह से तो नहीं ही नकारा जा सकता है, सर! वैसे यह अपने ही किसी कर्मचारी या अधिकारी का भी काम हो सकता है।"

"क्या मतलब?" चेयरमैन महोदय ने उत्सुकता दिखाई।

"आपूर्ति में हेर-फेर को छुपाने के लिए कुछ लोग ऐसा करते हैं, सर! जितना स्टॉक कम हो, उतना चूहों के नाम डाल कर खारिज करने के लिए। मैंने तो सुना है, सर! कि सचिवालयों के बाबू लोग तो इस कार्य के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित किए गए चूहे पालते हैं, जिन्हें केवल फाइल नम्बर भर बता देने से काम चल जाता है। कभी भूल-चूक से यदि कोई फाइल चूहों द्वारा आधी-अधूरी कुतर कर छोड़ दी जाती है, तो प्रमाण स्वरूप फाइल का एक-आध कुतरा पन्ना रख कर शेष बाबू लोग कुतर लेते हैं। यह भी सुना है कि इन चूहों को लंच के समय बाबू लोग प्यार से अपने हाथ से घर का बना विशेष भोजन कराते हैं। सर! मेरी मानिए तो आप इस 'चूहा घोटाला' को तुरन्त विजिलेंस विभाग को जॉच-पड़ताल के लिए दे दीजिए।"

मुख्य सुरक्षा अधिकारी की यह राय सुनकर हमारे हाथ के तोते उड़ गए। बमुश्किल हमने अपने चेहरे का रंग बनाए रखा। कहना जरूरी नही कि इस 'चूहा घोटाला' पर विजिलेंस की जॉच-पड़ताल के दौरान हम और हमारी श्रीमती जी ने प्रति दिन घर में ढूँढ़-ढूँढ़ कर एक-एक बिल के सामने घी-रोटी और मोदक परसने और लम्बोदर वाहक की सस्वर वन्दना का जो सिलसिला शुरू किया उसे

हम आज जॉच–प्रकिया से बे–दाग निकल जाने के बाद भी सतत् जारी रखे हुए हैं।

यदि आपमें से कोई पाठक अथवा पाठिका किसी घोटाले में स्वयं अथवा किसी मित्र की अनुकंपा से फंसे हुए हों अथवा भविष्य में फंसने की संभावना पाले हुए हों और हमारी तरह बे–दाग निकलना चाहते हों, तो उन्हें चाहिए कि वे सुबह–शाम निर्विघ्न–कारी गणेश जी की स्तुति करना छोड़कर उनके इस लघुकाय दूत की यह लघु स्तुति गाएं–

ॐम जय चूहा राजा, स्वामी जय चूहा राजा।
त्याग दूसरों का घर, मेरे घर आजा।।
लघुकाया के स्वामी, तीक्ष्ण दंतधारी।
जन–जन तुमसे कॉपे, तुम सब पर भारी।।
ठगे खड़े सब देखें, तेरी कुतराई।
पल भर में कर देते, पर्वत को राई।।
कुपित दृष्टि जिन–जिन पर, तेरी जाय पड़ी।
उनकी–उनकी खटिया, तुमने करी खड़ी।।
गोचर कभी अगोचर, मायावी नामी।
त्रिभुवन के तुम मालिक, हम तेरे टॉमी।।
विषय–विकार मिटाओ, मोह हरो मेरा।
जो जी चाहे कुतरो, सब कुछ है तेरा।।
शरण गहे की लज्जा, रखना बिलवासी।
सेवा में तुम अपनी, रख लो चपरासी।।

▪▪▪

जब हम चौड़ी सड़क और साफ सुथरी नालियों वाली शहर की इस पॉश कॉलोनी 'भद्रलोक' में बहैसियत किरायेदार आए थे, तब जहॉ एक ओर हमें इस बात की खुशी हो रही थी कि अब जल्दी ही हमारी गिनती भी भद्र लोगों में होने लगेगी, वहीं दूसरी ओर इस बात की भी तसल्ली हो रही थी कि तंग गलियों वाले मोहल्ले के तंग मकान में रहने के कारण एक अरसे से हमसे तंग हमारी पत्नी एक बार फिर हमारे प्रति प्रेम से लबलबा उठेगी। मकान बदलने की सौ झंझटों को निपटाकर कुछ दिन आराम करने के बाद एक दिन हमें अचानक ही इस बात का एहसास हुआ कि हम जरूरत से कुछ ज्यादा ही भद्र होते जा रहे हैं। हमने आम आदमी के आस–पास बने रहने में अपनी भलाई समझ कर राह में आते–जाते टकराने वाले पड़ोसियों को देखकर बिला वजह मुस्कराना शुरू कर दिया। हमारी आशा के विपरीत हमारी यह हरकत हमारे पड़ोसियों को उतनी ही नागवार लगी, जितनी की एक जवान लड़की को उसकी जगह उसकी उम्रदराज मॉ पर किसी जवान छोकरे को सीटी बजाता देखकर लगती है। हमारे पड़ोसियों ने हमारी मुस्कराहट के जवाब में और अधिक गंभीर मुद्रा अपना कर जल्दी ही हम पर यह पूरी तरह स्पष्ट कर दिया कि उनकी कॉलोनी पूरी तरह से भद्र हो चुके लोगों की हैं।

घर के चारों ओर खिली–खिली धूप होने के बावजूद जब इस कॉलोनी का मौसम हमें जून के महीने में भी बड़ा सर्द लगा तो हमारे दिल में जब–तब उठने वाला दर्द स्थायी होने लगा। इस दर्द के लिए एक हमदर्द की तलाश में हमने घर बदलने की सोची, परन्तु भद्र लोगों के बीच भद्र हो रही अपनी पत्नी का खयाल करके हमें अपना भद्र बना रहना ही अनिवार्य लगा और हमने भी ऑफिस के पहले और बाद में घर में जमे रहकर भद्र बनने का अभ्यास शुरू कर दिया। तंग गलियों वाले मोहल्ले के तंग मकान में पत्नी को जमाए रखने की नीयत से और पास–पड़ोस में अपनी आला अफसरी का रौब गालिब रखने की गरज से हम एक अदद रंगीन टेलीविजन पहले ही खरीद चुके थे, हालांकि उसमें आने वाले दूरदर्शन के

कार्यक्रमों को हम हमेशा से दूर–से दर्शन के काबिल माना करते थे। इस कॉलोनी में अपने सुबह और शाम के खाली समय के दुःखभंजन की विवशता के कारण हम मनोरंजन के नाम पर दूर से दर्शन योग्य कार्यक्रमों के भी काफी निकट हो गए। पत्नी के लाख चाहने पर भी पास–पड़ोस की देखा–देखी गमलों में लगाए गए कुछ फूल–पौधों की देखभाल तो हम कभी नहीं कर सके, परन्तु कृषि दर्शन कार्यक्रम की बदौलत हमें रबी और खरीफ की समस्त उन्नत किस्म की फसलों की जुताई–गुड़ाई की पूरी तमीज हो गई। करेन्ट अफेयर कार्यक्रमों के मार्फत हमें अपने देश और विदेश के आला दरजे के अफेयर्स की भी जानकारी रहने लगी, परन्तु ऊपर वाला झूठ न बुलवाए, भद्र बनने के ऐसे अभ्यास के दौरान हमें छोड़ कर आए हुए मोहल्ले के अफेयर्स की यादें ठीक उसी तरह आती रहीं, जिस तरह ससुराल में कदम रखने के बाद हर वधू को अपनी मॉं की और किसी–किसी को मायके में छूटे प्रेमी की याद आती रहती है।

सच मानिए, जितने दिन हम वहॉं रहे थे, कभी अखबार पूरा पढ़ने का मन नहीं किया। बेतार के तार द्वारा प्राप्त होने वाली नितान्त स्थानीय खबरों के सामने दूर देश–प्रदेश में हो रहे किसी भी हवाला–घोटाला अथवा न्यूयार्क की गाय–गोरू विहीन सड़कों पर अचम्भित किसी नेता विशेष पर विशेष रपटें भी हमें फीकी लगती थीं। बन्ने मियॉं के नन्हें की पतंग का पेंच किसके साथ लड़ रहा है.....कृपण कुमार से मोहल्ले की पूजा कमेटी ने चंदा पाने के लिए कितनी बार ऊठक–बैठक की.....सरदार लाभ सिह और उनकी पत्नी के बीच होने वाले नियमित दंगल में किस दिन कौन ज्यादा 'अ–सरदार' रहा......महतो की भैंस ने दूध अधिक दिया या पानी.......कमला और उसकी सास ने एक दूसरे के कितने पूर्वजों को पूजा– जैसी सूचनाओं की बदौलत उधर दिल–लगी और दिल्लगी का ऐसा भरपूर इंतजाम था कि हमारा दिल हमेशा स्वस्थ बना रहता था। पड़ोस में पकने वाली बेमजा खिचड़ी का भी स्वाद वहॉं के सभी लोग चटखारे ले–लेकर लेते थे। इस कॉलोनी के मकानों की बड़ी–बड़ी खिड़कियों की तुलना में उधर की तंग खिड़कियों में ताक–झांक की बेहतर सहूलियत थी। पास–पड़ोस की सुविधा का खयाल रखकर खिड़कियों को बिना परदा डाले खुला रखने की स्वस्थ परम्परा भी उधर कायम थी। ऐसे हमदर्द पड़ोसियों के प्रति

पड़ोसी धर्म का निर्वाह करने के लिए गाहे–बगाहे हम भी पत्नी के साथ मुफ्त मिलने वाले मनोरंजन का एहसान चुकाने की नीयत से वाद–विवाद प्रतियोगिता रख लिया करते थे। इस कॉलोनी में तो हम अपनी पत्नी से प्यार का इजहार तक करने को तरस गए हैं क्योंकि भद्र लोगों की संगत पाकर वह हमसे सवाया भद्र हो गई हैं। फुसफुसा कर उससे बात करने पर भी उसे यह फिक्र सताने लगती है कि पड़ोसी सुनेंगे तो क्या कहेंगे।

पहला महीना बीतते ही हमारे मकान मालिक से भी पहले इस कॉलोनी की प्रबंधन कमेटी हमारी भद्रता का आकलन करने आ धमकी। एक साथ आधा दर्जन लोगों को अचानक अपने सामने पाकर हमने समझा कि किसी सार्वजनिक कार्य की व्यवस्था के लिए चंदा वसूलने कुछ सार्वजनिक हमदर्द आए हैं। अपनी तनहाई से उकताये बैठे हम यह सोचकर प्रसन्न हो गए कि चलो, इन लोगों के साथ पॉंच और पचास की हुज्जत में कुछ देर मनोरंजन होगा। यूँ भी मेरा मानना है कि चंदे की उगाही के पीछे लोगों का मुख्य उददे्श्य मनोरंजन की व्यवस्था करना ही होता है और इसी कारण चंदा देने की मजबूरी को भली–भॉंति समझते हुए भी हम बदले में हील–हुज्जत के बहाने कुछ अपना भी मनोरंजन कर लेने का प्रयास कर लेते हैं। इसलिए यह जानकर हमें खासी तकलीफ हुई कि आने वाले लोग चंदा उगाहने नहीं बल्कि कर वसूलने आए हैं। एक सज्जन ने अपना और कमेटी के सदस्यों का परिचय देने के पश्चात इस कॉलोनी के भद्र लोगों के बीच रहने के सुख पर लगने वाले मासिक मनोरंजन कर की दर और उददे्श्य की हमें जानकारी दी, और हमने भी भद्र होने का अभिनय करते हुए उन्हें मनोरंजन कर के साथ–साथ जलपान भी पेश किया। हालांकि आम वेतनभोगी की तरह हमें भी किसी भी तरह के कर की अदायगी में पीड़ा होती है परन्तु स्रोत पर ही कर की कटौती की सरकारी व्यवस्था के कारण हम कर भुगतान की मजबूरी में अपना गौरव मानते हैं। कमेटी द्वारा निर्धारित मासिक मनोरंजन कर की नियमित अदायगी की मजबूरी में भी अपना गौरव मानने की विवशता को देख कर ही हमने भद्र बना रहना सहर्ष स्वीकार किया था। जलपान के दौरान पधारे भद्र लोगों ने भद्रता के साथ कॉलोनी में रहने, उठने, बैठने के नियमों की हमें जानकारी दी, जिनके पालन का वचन देकर हमने अपनी भद्रता को उनकी भद्रता के स्तर का सिद्ध कर दिया।

हमारी भद्रता की चर्चा से प्रभावित होकर कॉलोनी की महिला सभा ने हमारी पत्नी की भद्रता का भी परीक्षण कर लेना आवश्यक समझा और उनका एक शिष्ट मंडल भी उसी शाम हमारे घर पर आ पहुँचा। भद्र कहलाने को ललायित हमारी पत्नी ने हमारा अनुसरण करते हुए इस शिष्ट मंडल को अपने सर–ऑखों पर लिया और खातिरदारी के प्रभाव से भद्र होने का प्रमाण–पत्र प्राप्त कर लिया। शिष्ट मंडल ने उन्हें महिला सभा की भावी कर्मठ सदस्या के रूप में स्वीकार कर लिया।

इधर हम अपनी भद्रता के कारण पास–पड़ोस के स्थानीय मुद्दों की फिक्र से ऊपर उठकर राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों की फिक्र में दुबलाने लगे, उधर हमारी पत्नी पहली बार किसी महिला सभा की सदस्यता प्राप्त कर खुशी में ठीक उसी तरह फूलने लगी, जिस तरह अच्छे वर की तलाश में छरहरा बने रहने को बाध्य कोई कन्या वर प्राप्ति के पश्चात फूलने लगती है। तंग मकान के तंग वातावरण से बाहर आकर हमारी पत्नी का व्यक्तित्व प्याज की परतों की तरह खुलने लगा और वह हमारे लिए एक अनबूझ पहेली बनने लगी। जहॉ पहले वह हमसे पास–पड़ोस में हो रहे सास–बहू के झगड़ों की चर्चा किया करती थी, वहीं अब वह राष्ट्रीय स्तर के राजनीतिक दलों के अंतर्कलह पर प्रकाश डालने लगी। हमें उसके व्यक्तित्व में हो रहे इस परिवर्तन का पहली बार गंभीरता से तब एहसास हुआ जब आगामी सात जन्मों के वैवाहिक जीवन का बीमा कराने के लिए करवा चौथ का व्रत रखकर हमारे दीर्घायु होने की कामना करने वाली हमारी पत्नी पुरुष प्रधान समाज में नारीवाद का प्रभुत्व स्थापित करने के लिए, पुरुषों को नेस्तनाबूद करने की बात करने लगी। कुछ दिन पहले महिला सभा से लौटकर वह तैश में बोली,'' बस, बहुत हो चुका, अब और नहीं सहा जाएगा। हम दिखा देंगे कि औरत नुमाइश की चीज नहीं हैं''

इससे पहले हमने उसे इतने तैश में कभी नहीं देखा था। अतः आदत के विपरीत हमने उसकी बात पर ध्यान देना जरूरी समझ कर पूछा,'' क्या बात है, कहॉ किसकी नुमाइश हो रही है?''

उसने अपनी साड़ी के पल्लू को पहले की तरह कमर में कसने के स्थान पर कंधे पर करीने से संभालते हुए संपूर्ण भद्रता के साथ

व्यंग्य किया,'' देखा! औरत की नुमाइश की बात सुनते ही कान में जूँ रेंग उठी।'' और उसके बाद पुरुष प्रधान मानसिकता वाले समाज के उपलब्ध इस एकमात्र प्रतिनिधि की खासी लानत–मलानत के पश्चात उसने अपने आवेश का खुलासा किया,''पुरुषों को मानना ही होगा कि नारी केवल मांस और हड्डियों का पुतला नहीं है। नारी शरीर की माप–तौल के आधार पर उसकी सुन्दरता का आकलन पूर्णतया गैर भारतीय और हमारी संस्कृति के विपरीत है। हम अमिताभ बच्चन को हीरो से जीरो बना देंगे और 'वर्ल्ड ब्यूटी कॉन्टेस्ट' को भारत में नहीं होने देंगे।'' फिर पता नहीं हमें परखने के लिए अथवा हर मुद्दे पर हमारी राय ले लेने की औपचारिकता निभाने के लिए उसने हमसे पूछा,'' अच्छा, तुम्हारी क्या राय है? 'वर्ल्ड ब्यूटी कॉन्टेस्ट के विरोध के लिए हमें क्या करना चाहिए?''

हम जीवन में पहली बार उनके किसी प्रश्न पर घबरा उठे।'वर्ल्ड ब्यूटी कॉन्टेस्ट' के प्रति उनके आवेश के औचित्य से हमारा नारियों के प्रति सदैव कमजोर रहने वाला दिल कतई सहमत नहीं था। हम तो आफ्टर शेव लोशन जैसा पुरुषों का प्रसाधन तक ताजा शेव किए हुए गालों को निहारती–सहलाती महिला मॉडल पसन्द आने पर ही खरीदते हैं। नहाने के साबुन का चयन तक हम साबुन से अधिक उसका प्रचार कर रही लोकप्रिय नायिकाओं के तुलनात्मक आकलन के आधार पर करते हैं। हमें याद है कि अपने स्वर्गीय दादा जी के हुक्के और स्वर्गीय पिता जी की सिगरेट के स्थान पर जीवन में धूम्रपान की लत का प्रारम्भ तक हमने महिला छाप बीड़ी से किया था। फिर भी हमने समझदार पति होने के कारण आवेशित पत्नी से इस विषय पर बहस करना मुनासिब नहीं समझा और सलाह दी,''मेरे विचार से तो औरतों को दूरदर्शन द्वारा प्रसारित किए जाने वाले इस कार्यक्रम का 'ऑखों देखा विवरण' का बायकाट कर देना चाहिए।''

''और पुरुषों के लिए कार्यक्रम को होने देना चाहिए!?'' हमारी पत्नी ने अपने आवेश को थोड़ा और पैना किया,''इस मुगालते में मत रहिएगा। अव्वल तो हम यह कॉन्टेस्ट होने नहीं देंगी और यदि हुआ भी तो इस कालोनी में किसी पुरुष को देखने नहीं देंगी।''

विश्व की चुनिंदा नारियों के सौन्दर्य का जायजा लेने की हमारी लालसा पर उनकी नई–नई प्राप्त भद्रता का ग्रहण लगता

देख हमारी सहनशीलता ने जवाब दे दिया। हमने 'भद्रलोक' की लादी हुई भद्रता के चक्रव्यूह से बाहर निकलकर पैंतरा बदला," पिछले एक साल से अपने निखट्टू कपूत के लिए एक अदद लड़की के चुनाव के लिए जो आयोजन तुम चला रही हो, वह क्या किसी सौन्दर्य प्रतियोगिता से कम है? चरित्र, व्यवहार और संस्कारों के समन्वय को नारी सौन्दर्य का आधार मानने के स्थान पर उसकी कद–काठी, नैन–नक्श, रंग–रूप की जॉच–परख का तुम्हारा यह सिलसिला कौन–सी भारतीय परम्परा के अंतर्गत आता है?"

पता नही हमारे प्रश्न के निहितार्थ से घबड़ा कर अथवा अपनी होने वाली बहू के चयन के विशेषाधिकार में किसी संभावित हस्तक्षेप के भय से उसने भी भद्रता के चक्रव्यूह से बाहर निकलना उचित समझा और हमारे तर्क को भोथरा करने के लिए एक दीर्घ अलाप लेकर तार सप्तक पर रोदन गान छेड़ दिया।

भद्र पाठकों की रुचि और अभद्रता के प्रति उनके संकोच को ध्यान में रखने के साथ–साथ अपनी अभद्रता पर परदा डाले रखने की गरज से बात यहीं खत्म कर रहा हूँ। वैसे भी इस समय भद्र पाठकों की रुचि सफलतापूर्वक सम्पन्न हो चुके 'वर्ल्ड ब्यूटी कॉन्टेस्ट' की सुदर्शना प्रतिभागियों के बीच से अपनी पसन्द की 'मिस वर्ल्ड' चुनने में अधिक होगी न कि अभद्रता के चक्रव्यूह में फंसे किसी अभिमन्यु की अन्तिम परिणति जानने में।

■ ■ ■

त्रिकोणीय रोमांच की असफल तलाश

लाल सिंह जिन्हें उनके दोस्त उनके सामने प्यार से लल्लू उस्ताद और पीठ पीछे लल्लू बुलाते थे, अंततः त्रिकोणीय रोमांच की तलाश में इस दुनिया से कूच कर गए। उनकी मौत की खबर राष्ट्रीय महत्व का दर्जा पाकर आम लोगों तक नही पहुँच पाई, क्योंकि उनके जीते जी और मरने के बाद उनके घर से चार करोड़ तो दूर, चार फूटी कौड़ियों के मिलने की कोई संभावना नही थी। हम जैसे कुछ छंटे हुए लोगों तक भी यह खबर इतनी देर से पहुँची कि उनकी याद में एक शोक–सभा का आयोजन भी नहीं हो सका।
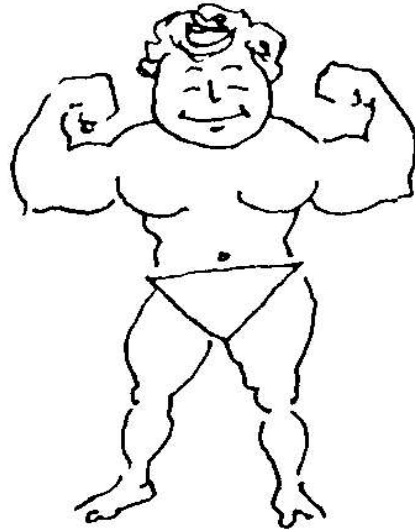
त्रिकोणीय रोमांच की तलाश में भटकती उनकी जैसी शख्सियत से खासो–आम का अपरिचित रह जाना मुझे हमेशा सालता है। लल्लू उस्ताद तो बकौल उनके हमारे लंगोटिया यार थे। यह दीगर बात है कि हमारे जन्म के समय 'हगीस' और 'सेल स्टील की सेफ्टीपिन' का चलन न होने के कारण गॉठदार लंगोटनुमा पोतड़ों में मुँह बिसूरने की मजबूरी के बाद लंगोट से हमारा कभी संबंध नही रहा। पायजामे और पतलून के नीचे हमारे जैसा साधरण आदमी क्या पहनता है, इसमें जनसाध ारण को भला क्या दिलचस्पी होगी? पर लल्लू उस्ताद तो आम लोगों के बीच का होने पर भी खास थे, अतः यह बताने में हमें कोई संकोच नही कि गज–गज भर लंबी टी–आकार में फैली 'तीन स्वतंत्र भुजाओं वाली' लंगोट को त्रिकोणीय आकार में सहज धारण करने की कला उन्हें अपने पिता लाभ सिंह उर्फ लभ्भू पहलवान से विरासत में मिली थी। अतः, जब–जब लल्लू उस्ताद स्वयं को हमारा लंगोटिया यार बताते थे, हम उनकी बात को निर्विरोध मान लेने के लिए मजबूर हो जाते थे। गुजर चुके लोगों के प्रति तो हम सब सहृदय होते ही हैं।

रोटी, कपड़ा और मकान के त्रिकोण के रोमांच को झेल रहे आम आदमी का किसी अन्य त्रिकोण में उलझना असामान्य ही कहा जाएगा, परन्तु यदि लल्लू उस्ताद भी ऐसा ही सोचते तो आम आदमी के बीच का होकर आज विशेष होने का दर्जा न पाते।

त्रिकोणीय रोमांच में उनकी रुचि का सूत्रपात स्कूली दिनों में ही हो गया था। अखाड़े के दॉव–पेंच का रियाज करने के साथ–साथ वह पढ़ाई का भी ठोस रियाज कर रहे थे। इसलिए जब तक हम हड़बड़ा कर मैट्रिक में पहुँच कर उनके सहपाठी बने, तब तक वह कई बार अपने सहपाठियों को विदाई दे चुके थे। ऐसे पक्के रियाज की बदौलत वह बदन के साथ–साथ उम्र में भी हम सब से ड्योढ़े हो गए थे। उनकी ड्योढ़ी उम्र और बदन का हम सभी लिहाज करते थे और इस कारण उन्हें अपने अखाड़ीय दॉव–पेंच के रियाज का मौका नहीं मिल रहा था। तंग आकर एक दिन उन्होंने अपने दो सहपाठियों के बीच सरल सीधी रेखा में हो रहे एक मुकाबले में जबरन कूद कर उसे त्रिकोणीय बना डाला। इस मुकाबले में उन्हें दोगुना रियाज का ऐसा आनन्द मिला कि उन्हें आर–पार के द्विबिन्दुयी मुकाबलों में कोई रुचि नही रह गई। त्रिकोणीय रोमांच की

तलाश में उन्हें हर फटे में टाँग डालने की लत लग गई। उनकी इस लत की कुछ यादें आज भी हमारी पसलियों में उभरती रहती हैं।

खुदा राजकपूर को जन्नत अता करें, जिन्होंने त्रिकोणीय प्रेम–कथा पर आधारित फिल्म 'संगम' बना कर लल्लू उस्ताद की इस लत को एक नया आयाम दे डाला। लल्लू उस्ताद इस फिल्म की नायिका वैजयंती माला पर कुछ यूँ फिदा हुए कि हम सहपाठियों से आँखें चुराकर पास–पड़ोस में उसे तलाशने लगे। बगल से गुजरने वाली अथवा छत पर लटकी–अटकी किसी कन्या को देख–देख कर वह 'बोल राधा बोल' गाने लगे और उनके सहपाठी उनकी पुरानी यारी का लिहाज रखने के लिए' दोस्त दोस्त न रहा' गुनगुनाने लगे। कुछ कन्याओं ने उनकी राधा बनने की सहमति भी दे दी, परन्तु त्रिकोणीय रोमांच की तलाश करते लल्लू उस्ताद का कोई भी सहपाठी राजेन्द्र कुमार की भूमिका निभाने को तैयार नहीं हुआ। सहपाठियों के इस इन्कार के पीछे इस प्रेम–कथा के अंत में राजेन्द्र कुमार द्वारा खुदकुशी करने की अनिवार्यता का भय अधिक था अथवा लल्लू उस्ताद के हाथें शहीद होने का, इस पर हम कभी अन्तिम निर्णय नही दे पाए। अतः जब लल्लू उस्ताद को स्कूल परिसर में ही एक अध्यापिका और अध्यापक के बीच चल रहे प्रेम–प्रसंग का पता चला तो वह त्रिकोणीय रोमांच के अनुभव के लोभ का संवरण नही कर सके। मगर राजकपूर वाले कोण को झटकने की उनकी लालसा पर प्रधानाचार्य की अनुशासनात्मक कार्यवाही का अंकुश लग गया और उन्हें राजेन्द्र कुमार वाले कोण पर ही संतोष कर स्कूल–लोक से पलायन करना पड़ गया।

त्रिकोणीय रोमांच के प्रति बढ़ते उनके लगाव को देखकर उनके पिता लभ्भू पहलवान ने उनके लिए एक अदद राधा की तत्काल व्यवस्था कर दी। लल्लू उस्ताद भी आम विवाहित पुरुषों की तरह त्रिकोण का विचार त्याग कर सरल–सीधी रेखा पर चलने लगे। आम आदमी को आम आदमी की तरह चुकते देखकर लभ्भू पहलवान के साथ–साथ हम सबने भी संतोष की सांस ली थी। परन्तु यदि लल्लू उस्ताद भी सदैव सरल–सीधी रेखा पर चलते हुए खप जाते तो आज उन्हें याद करने की हमारे पास कोई वजह ही नहीं होती।

अब लल्लू उस्ताद को याद करते हुए बी. आर. चोपड़ा पर लानत भेजने का मन कर रहा है। फिल्म 'पति, पत्नी और वह' बनाकर प्रत्येक

विवाहित पुरुष के हृदय में एक त्रिकोण स्थापित करने की कामना जगाने के पीछे उनका मकसद क्या था, यह मैं आज तक नही समझ पाया हूँ। यह भी नही पता कि उनकी इस फिल्म से प्रोत्साहित होकर कितने विवाहित पुरुषों ने सफलता के साथ त्रिकोण रचे, क्योंकि ऐसे ऑकड़ों को छंटे हुए राजनीतिज्ञों के गुप्त किया–कलापों से भी अधिक गुप्त रखना सबकी मजबूरी है। बहरहाल, उनकी इस फिल्म ने लल्लू उस्ताद के हृदय में त्रिकोणीय रोमांच की राख हो रही चिंगारी को हवा देकर ऐसी ज्वाला

में बदल डाला, जिसका ताप वह मरते समय तक झेलते रहे। संयोग से या दुर्योग से लल्लू उस्ताद ने 'संगम' के बाद जो फिल्म देखी थी, वह यही थी। 'संगम' के राजेन्द्र कुमार वाले रोल की तुलना में इस फिल्म में संजीव कुमार वाला रोल उन्हें ज्यादा सेफ लगा और इस कारण उन्होंने त्रिकोणीय रोमांच वाले रोगाणुओं से बचने का प्रयास भी नही किया। फिल्म देखने के तुरन्त बाद से उन्होंने त्रिकोण के लिए आवश्यक तीसरे बिन्दु की तलाश शुरु कर दी।

लल्लू उस्ताद की इस तलाश की खबर जब उनकी राधा को लगी तो पहले तो उसने उन्हें जम कर पूजा, फिर भगवान को जम कर पूजा और अंत में भगवान को पूजते–पूजते वह उनको प्यारी हो गई। त्रिकोण की स्थापना से पूर्व ही लल्लू उस्ताद बिन्दु पर सिमट गए। परन्तु इस दुर्घटना के बाद भी त्रिकोण बनाने की उनकी रुचि में कोई कमी नही आई। स्कूल में जम कर किए गए रियाज की बदौलत वह यह बात भली–भॉंति जानते थे कि त्रिकोण के निर्माण के लिए पहले एक आधार रेखा का निर्माण आवश्यक होता है। इसके लिए उन्होंने बुढ़ा रहे लभ्भू पहलवान का दामन पकड़ा और अंततः उन्हें मनाकर एक अदद रेखा की व्यवस्था कर डाली। परन्तु उन्हें इस बात का आभास जरा देर से हुआ कि इस बार वाली रेखा सरल–सीधी न होकर जरा वक्र थी। अपने त्रिकोण के लिए उपयुक्त तीसरे कोण की तलाश में व्यस्त लल्लू उस्ताद को इस रेखा की वक्रता का पता तब चला, जब उसने ही अपना एक स्वतंत्र त्रिकोण बना लिया। पहली भगवान को प्यारी हुई थी, दूसरी पड़ोसी को प्यारी हो गई। इस अनापेक्षित त्रिकोण में लल्लू उस्ताद के लिए एक बार फिर राजेन्द्र कुमार वाला कोण निश्चित हुआ था, जिसे उन्होंने स्वीकार नही किया और आधार रेखा पर त्रिकोण बनाते–बनाते वह पुनः बिन्दु पर सिकुड़ गए। शयद वह कभी एक त्रिकोण के निर्माण में सफल हो भी जाते, परन्तु उसके लिए आवश्यक आधार रेखा की व्यवस्था करने वाले उनके पिता त्रिकोण की इस बार वाली तलाश के दौरान चुक गए थे।

हमारा अनुमान था कि आधार रेखा के अभाव में त्रिकोण के निर्माण की असंभावना के कारण लल्लू उस्ताद त्रिकोणीय रोमांच की अपनी तलाश बंद कर देंगे। परन्तु एक दिन जब वह मिले तो उन्होंने हमारे इस अनुमान को झुठला दिया। उन्होंने हमारे कंधे पर अपना पंजा छाप कर कहा था, " अमॉं देखा! इस बार का त्रिकोणीय मुकाबला कितना रोमांच–कारी था?"

हमने स्वाभाविक रूप से चौंक कर पूछा था,'' अरे! यह कब और कैसे हुआ?''

लल्लू उस्ताद ने हँसकर हमारे कंधे पर पुनः अपना पंजा छाप कर कहा था,'' अमॉं, टी. वी. नही देखते हो क्या!? देखा नही, अंत तक कैसा रोमांच बना रहा! तीन–तीन बार साउथ अफ्रीका से हार कर और दो बार आस्ट्रेलिया से हारते–हारते जीत कर किस तरह फाइनल में भारत ने 'टाइटन कप' जीत लिया! सच में, इसे कहते हैं असली त्रिकोणीय रोमांच।''

जहॉं तक हमें याद है, लल्लू उस्ताद की रुचि क्रिकेट में तीन के स्थान पर बाइस खिलाड़ियों के कारण हमेशा शून्य रहती थी। अपने गली–मोहल्ले में बचपन में उन्होंनें कभी क्रिकेट खेली भी थी तो सिर्फ किसी त्रिकोणीय संघर्ष की तलाश में। टास हारते या जीतते, बल्लेबाजी सबसे पहले वही करते थे। उनकी क्रिकेट के त्रिकोण में बल्लेबाज के साथ गेंदबाज दूसरा कोण और शेष क्षेत्ररक्षक तीसरा कोण हुआ करते थे। अम्पायर को वह अनावश्यक कोण मानते थे और उसे हटाकर उसकी भूमिका स्वयं निभाते थे। उनका विकेट हमेशा 'नो बाल' पर ही गिरता था और वह हमेशा रिटायर होकर विकेट से हटते थे। कभी गेंदबाजी का मन करता तो बल्लेबाज के पैर से टकराने वाली उनकी हर बाल विकेट की सीध में होती थी।

उस दिन वह देर तक 'टाइटन कप' के त्रिकोणीय मुकाबले के रोमांच का बाल–दर–बाल रिप्ले करते रहे और हम उनकी त्रिकोणीय रोमांच की तलाश की ऐसी अवनति पर मन–ही–मन संताप करते रहे। हमने उन्हें और अधिक अवनति से बचाने के लिए त्रिकोण की पहली शर्त आधार रेखा की तलाश में सहायक बनने का मन–ही–मन संकल्प लिया। पर जैसा कि आमतौर पर होता आया है, नजरों से दूर होते ही लल्लू उस्ताद हमारे खयालों से दूर हो गए। कभी भूले–भटके उनकी याद भी आई तो यह सोचकर खुद को बहला लिया कि चलो क्रिकेट में रुचि दिखा कर वह आम आदमी होने का सबूत दे रहे हैं।

अन्तिम बार जब उनसे भेंट हुई थी, तब त्रिकोणीय रोमांच की तलाश का उनका उन्माद अपने चरम पर था। हमने उन्हें देखकर किसी गली में सरकने का विचार भी किया था, परन्तु उनकी लंगोटिया यारी के

भय से हम ऐसा नही कर पाए थे। इस बार मिलते ही हमारी पीठ पर पंजा छाप कर उन्होंने पूछा था,'' क्यों यार! यू.पी. कप देख रहे हो कि नही?''

मुझे लगा था कि वह शारजाह में चल रही त्रिकोणीय एक दिवसीय क्रिकेट श्रृंखला 'सिंगर कप' को उन्माद में यू.पी. कप कह गए हैं। हमने ऐसा सोचका जब 'सिंगर कप' के पहले मुकाबले का जिक्र किया तो वह बिगड़ गए,'' अबे घामड़! मैं यू.पी. कप की बात कर रहा हूँ...यू.पी. कप की, जहॉ त्रिकोणीय मुकाबले में बसपा और कांग्रेस के साथ सपा और भाजपा लोहा ले रहे हैं।''

सच उस दिन ही मुझे लग गया था कि अब वह ज्यादा दिन नही चल सकेंगे। त्रिकोणीय रोमांच की तलाश में वो इस हद तक विक्षिप्त हो चुके होंगे, इसका मुझे अन्दाज न था। हमने उन्हें डॉक्टर से मिलने की सलाह देनी चाही थी, परन्तु वह अपनी ही धुन में बोलते रहे थे,''अब देखना यह है कि गैर भाजपाइयों में कौन–कौन कल्याण सिंह पर कल्याण करेगा, भाजपाइयों में कौन–कौन मुलायम सिंह के प्रति मुलायम होगा और कौन–कौन विधायक मायावती की छाया में आएगा।'' और चलते–चलते उन्होंने कहा था,'' सरकार चाहे किसी की बने या न बने, असली रोमांच अन्तिम स्कोर को लेकर बना ही रहेगा।''

लल्लू उस्ताद के बारे में उस दिन का मेरा अनुमान सत्य निकला। लगभग पन्द्रह दिन बाद यह खबर मिली कि त्रिकोणीय रोमांच की तलाश में भटकते–भटकते दुर्बल हो चला उनका हृदय यू.पी. कप के त्रिकोणीय मुकाबले के रोमांच को और अधिक बर्दास्त नही कर पाया और उसी रात उन्हें दगा दे गया। यू.पी. कप के विजेता और मुकाबले में उतरे दलों का अन्तिम स्कोर अब वह नही जान पाएंगे, इसका दुःख मुझे हमेशा रहेगा।

■■■